DPHCN-05

जन स्वास्थ्य एवं सामुदायिक पोषण

सामुदायिक पोषण

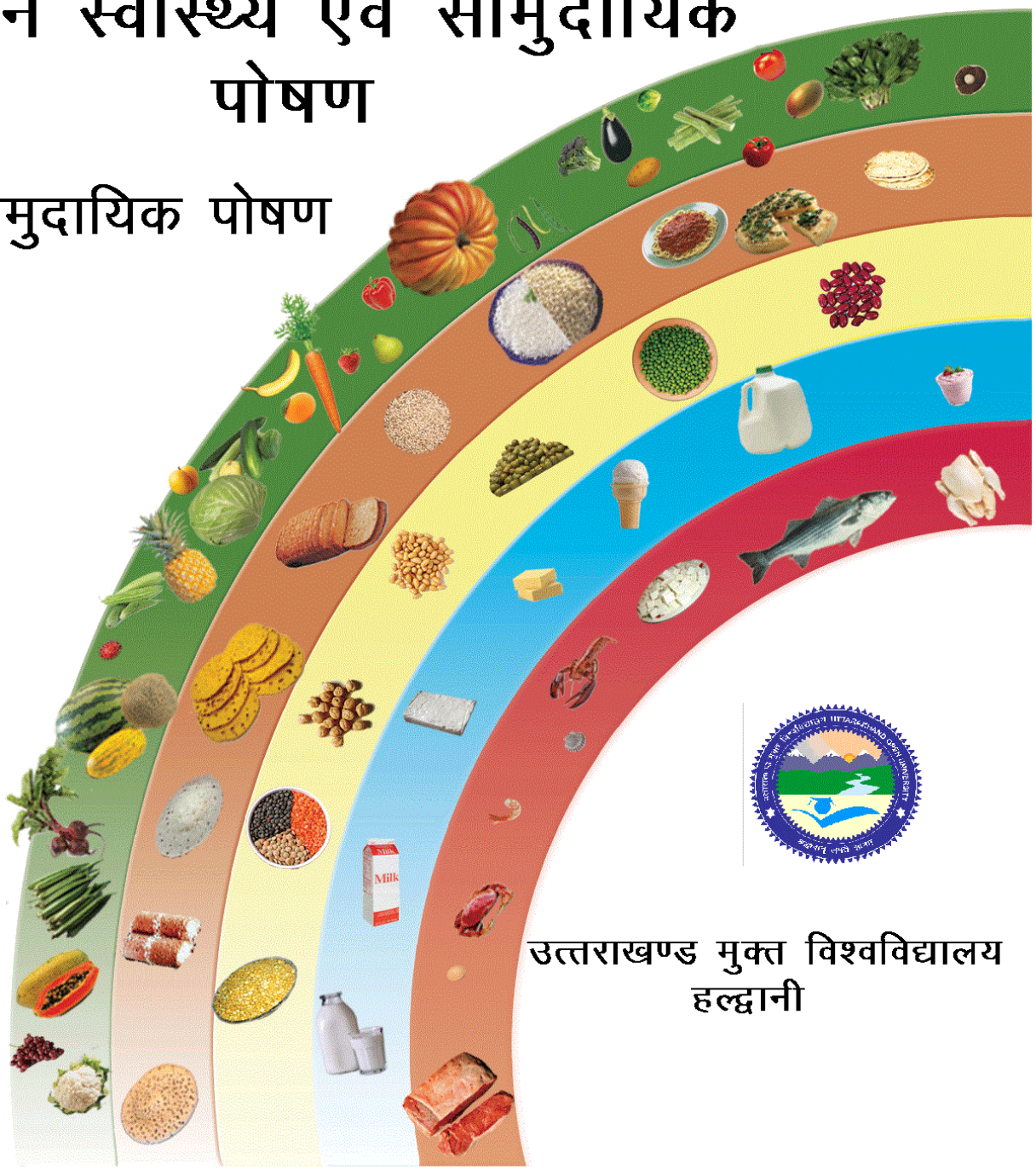

उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय
हल्द्वानी

जन स्वास्थ्य एवं सामुदायिक पोषण

Diploma in Public Health and Community Nutrition

उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय

तीनपानी बाई पास रोड, ट्रांसपोर्ट नगर के पास, हल्द्वानी-263139

फोन नं. 05946- 261122, 261123

टोल फ्री नं. 18001804025

फैक्स नं. 05946-264232, ई-मेल: info@uou.ac.in

http://uou.ac.in

विशेषज्ञ समिति

प्रो0 विनय कुमार पाठक
कुलपति
उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय
हल्द्वानी, नैनीताल

प्रो0 एन0 पी0 सिंह
निदेशक, स्वास्थ्य विज्ञान विद्याशाखा
उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय
हल्द्वानी, नैनीताल

डॉ0 रीता रघुवंशी
अधिष्ठात्री, गृह विज्ञान महाविद्यालय
गो0ब0प0कृ0 एवं प्रौ0वि0वि0
पन्तनगर विश्वविद्यालय

डा0 जी0 एस0 चौहान
पूर्व प्रो0 एवं विभागाध्यक्ष
गो0ब0प0कृ0 एवं प्रौ0वि0वि0
पन्तनगर विश्वविद्यालय

डॉ0 सरिता श्रीवास्तवा
प्रो0 खाद्य एवं पोषण विभाग
गृह विज्ञान महाविद्यालय
गो0ब0प0कृ0 एवं प्रौ0वि0वि0
पन्तनगर विश्वविद्यालय

कार्यक्रम समन्वयक — डॉ0 प्रीति बोरा एवं श्रीमती मोनिका द्विवेदी

इकाई लेखन	इकाई संख्या
डॉ0 निधि अग्रवाल, खाद्य एवं पोषण विभाग बनस्थली विद्यापीठ , राजस्थान	1
प्रो0 शील शर्मा , खाद्य एवं पोषण विभाग बनस्थली विद्यापीठ , राजस्थान	2,3,4
डॉ0 मोनिका जैन , खाद्य एवं पोषण विभाग बनस्थली विद्यापीठ , राजस्थान	5

पाठ्यक्रम सम्पादन

प्रो0 लीना भट्टाचार्या, वरिष्ठ अकादमिक परामर्शदाता
उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय, हल्द्वानी, नैनीताल

चित्रांकन — डॉ0 प्रीति बोरा एवं कु0 सृष्टि

कुलसचिव, उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय की ओर से मुद्रित एवं प्रकाशित।

समस्त लेखों/पाठों से सम्बन्धित किसी भी विवाद के लिए लेखक जिम्मेदार होगा। किसी भी विवाद के लिए जूरिसडिक्शन हल्द्वानी (नैनीताल) होगा।

कॉपीराइट: उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय — प्रकाशन वर्ष: 201**6**

संस्करण: सीमित वितरण हेतु पूर्व प्रकाशन प्रति

प्रकाशक: एम0पी0डी0डी0, उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय, हल्द्वानी

उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय, हल्द्वानी- 263139 (नैनीताल)

उत्तराखण्ड मुक्त विश्वविद्यालय, हल्द्वानी

सामुदायिक पोषण
DPHCN-05

इकाई	पृष्ठ संख्या
इकाई 1: पोषण ज्ञान का मूल्यांकन	1-23
इकाई 2: भारत में पोषण सम्बन्धी समस्याएँ	24-41
इकाई 3: सार्वजनिक वितरण प्रणाली	42-56
इकाई 4: पोषण का प्रत्यक्ष मानवीय खाद्य मूल्यांकन	57-80
इकाई 5 : पोषण का अप्रत्यक्ष मूल्यांकन	81-96

इकाई 1: पोषण ज्ञान का मूल्यांकन

1.1 प्रस्तावना
1.2 उद्देश्य
1.3 पोषण ज्ञान
1.4 पोषण ज्ञान प्रदान करने के कारण
1.5 पोषण ज्ञान सम्बन्धी क्रियाओं की योजना बनाने और उनको कार्यान्वित करने के मुख्य चरण
1.6 सफल पोषण ज्ञान के नियम
    1.6.1 पोषण ज्ञान सामग्री तैयार करने से पहले कुछ मुख्य बातें
1.7 पोषण ज्ञान की प्रक्रिया
    1.7.1 सम्पर्क विधि
    1.7.2 दूरस्थ विधि
1.8 पोषण ज्ञान के पूर्वायोजन
1.9 पोषण ज्ञान प्रदान करने हेतु उपयुक्त स्थान
1.10 पोषण ज्ञान की योजना
1.11 पोषण ज्ञान का मूल्यांकन
1.12 सारांश
1.13 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर
1.14 निबंधात्मक प्रश्न

1.1 प्रस्तावना

भारत विश्व का सातवाँ सबसे बड़ा और घनी आबादी वाला दूसरा देश है। भारत का क्षेत्रफल विश्व के क्षेत्रफल का केवल 2.4 प्रतिशत है लेकिन इस क्षेत्रफल में विश्व की आबादी की 17.31 प्रतिशत आबादी रहती है। 2011 की जनगणना के अनुसार भारत की आबादी 1.18 बिलियन से भी ज्यादा है। कृषि मंत्रालय की वार्षिक रिपोर्ट 2009-10 के अनुसार भारत का कुल भौगोलिक क्षेत्र करीब 328.7 मिलियन हैक्टेयर है। इसमें से खेती योग्य भूमि 140.03 मिलियन हैक्टेयर है, जबकि कुल उपजाऊ भूमि 193.7 मिलियन हैक्टेयर है। भारत की जनसंख्या का बहुत बड़ा प्रतिशत (लगभग 70-75 प्रतिशत) खेती पर आश्रित है।

यदि पोषण सम्बन्धी जानकारी प्रदान की जाए तो समुदाय में कुपोषण की समस्या को आसानी से हल किया जा सकता है। पोषण सम्बन्धी जानकारी नवयुवक, वृद्ध, साक्षर, निरक्षर, बालक, बालिका इत्यादि सभी ले लिए आवश्यक है क्योंकि इसके द्वारा उत्तम भोजन तथा पोषण के बारे में जानकारी प्राप्त होती है। पोषण स्तर में सुधार पोषण शिक्षा से ही सम्भव है। पोषण में सुधार लाने के लिए समुदाय स्तर पर पोषण से सम्बन्धित व्यवहारों में परिवर्तन लाकर पोषण स्तर में सुधार लाया जा सकता है और इसके लिए पोषण शिक्षा प्रदान करनी होगी।

1.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात छात्र;

- पोषण ज्ञान की समुचित जानकारी प्राप्त कर पाएंगे;
- पोषण ज्ञान प्राप्त करने के कारणों को जान पाएंगे तथा पोषण सम्बन्धी क्रियाओं की योजना बनाने और उन्हें क्रियान्वित करने के मुख्य चरणों की जानकारी प्राप्त कर पाएंगे;
- सफल पोषण ज्ञान के नियमों तथा प्रदान करने की विधियों की जानकारी ले सकते हैं; तथा
- पोषण ज्ञान प्रदान करने हेतु सहायक सामग्री की जानकारी तथा मूल्यांकन के बारे में जान पाएंगे।

1.3 पोषण ज्ञान

पोषण ज्ञान एक ऐसी प्रक्रिया है जिसके द्वारा व्यक्ति पोषण सम्बन्धी ज्ञान प्राप्त करते हैं तथा अपने खाद्य व्यवहार में आवश्यक परिवर्तन लाते हैं। इसका अभिप्राय यह है कि पोषण का अध्ययन ''सही प्रक्रिया का अनुसरण करके सही भोजन के चुनाव'' में समर्थ करता है। उचित चुनाव, स्वच्छ भोजन का उपभोग तथा उचित पाक प्रक्रिया, पोषण स्तर के प्रोत्साहन में सहायता करते हैं।

भारत के विभिन्न भागों में पिछले तीस वर्षों में पोषण सम्बन्धी कई सर्वेक्षण किये गये हैं। यह जानकारी दो भागों में विभक्त कर ICMR द्वारा प्रकाशित की गई है। एक भाग का नाम है ''न्यूट्रिशन एटलस'' और दूसरे भाग का नाम है ''डाइट एटलस''। आहार सम्बन्धी सर्वेक्षण में पाया गया है कि भारत की अधिकांश जनता के आहार में मुख्यतः अनाज ही होते हैं तथा फलों और सब्जियों की मात्रा बहुत कम होती है। आबादी के एक भाग को तो पर्याप्त आहार ही नहीं मिलता है। पोषण सम्बन्धी सर्वेक्षणों में पाया गया है कि कुपोषण के कारण कई प्रकार की बीमारियाँ फैली हुई हैं। स्तनपान छोड़ने वाले शिशुओं और बालकों में प्रोटीन-कैलोरी की अल्पता व विटामिन ए और राइबोफ्लेविन की बहुत कमी पाई गई है। गर्भवती महिलाओं और धात्री माताओं में लौह लवण, फोलिक एसिड और विटामिन B_{12} की कमी के कारण एनीमिया का रोग पाया गया है।

उपरोक्त परिस्थतियों के मुख्य कारण हैं-

- जनसंख्या में अत्यधिक वृद्धि
- बहुत कम क्रय शक्ति
- पोषण ज्ञान का अभाव, अन्धविश्वास और भोजन सम्बन्धी मिथक
- प्रतिव्यक्ति खेती योग्य भूमि की कमी और जमीन तथा पशुओं की बहुत कम उत्पादकता
- ओद्यौगिकीकरण का निचला स्तर
- अस्वास्थ्यकर वातावरण, जिसके कारण बार-बार संक्रामक रोग होते हैं तथा कुपोषण की समस्या को और अधिक जटिल बना देते है।

1.4 पोषण ज्ञान प्रदान करने के कारण

पोषण ज्ञान व्यक्ति को निम्न में समर्थ बनाती है-

1. व्यक्तिगत पौषण ग्रहण का मूल्यांकन करने में
2. प्रत्येक व्यक्ति को उचित भोजन का चुनाव करने में सक्षम बनाने में
3. उच्चतम पोषण प्राप्त करने के लिए सही पाक विधि का प्रयोग करने में
4. स्थानीय भोज्य पदार्थों तथा साधनों का विवेकपूर्ण उपयोग करने में
5. भोजन अपव्यय का हतोत्साहन करने में
6. ''स्वास्थ्य - सामुदायिक सम्पत्ति'' की धारणा को प्रोत्साहित करने में

1.5 पोषण ज्ञान सम्बन्धी क्रियाओं की योजना बनाने और उनको कार्यान्वित करने के मुख्य चरण

चरण 1: पोषण सम्बन्धी समस्याओं और उनके कारणों का विश्लेषण करना, लोगों/समुदायों तथा उनके व्यवहार को पहचानना।

- व्यवस्थित मूल्यांकन, पोषण सम्बन्धी समस्याओं तथा उनके कारणों को परिभाषित करना।
- पोषण सम्बन्धी समस्याओं जिनका समुदाय को ज्ञान हो, का चुनाव करना तथा उन्हें क्रमबद्ध करना।
- समुदाय का व्यवहार तथा इस व्यवहार के कारण को पहचानना।

चरण 2: उद्देश्यों, लक्ष्य समूह तथा सहायकों को परिभाषित करना।

- पोषण और ज्ञान के उद्देश्यों का निर्धारण करना।
- असुरक्षित समूह तथा लक्ष्यकारी समूह को परिभाषित करना।

- सामाजिक कार्यकर्ता, अध्यापक इत्यादि जिनसे समाज सबसे अच्छे तथा प्रभावी तरीके से सीख सकता है, उन्हें पहचानना।

चरण 3: योजना का निर्माण तथा विशिष्ट/सुनिश्चित तरीके से क्रियाविधि का विकास करना।

- संचारण/संदेश योजना को परिभाषित करना (व्यक्तिगत, छोटे समूह तथा बड़ी सभा में)
- ज्ञान सम्बन्धी प्रस्ताव के बारे में बताना
- प्रत्येक क्रिया की लागत/खर्च को जाँचना।

चरण 4: पोषण सम्बन्धी विषय/प्रसंग, संदेश तथा संचारण माध्यम व सामग्री की योजना बनाना।

- सबसे अधिक महत्वपूर्ण विषयों/प्रसंगों को क्रमबद्ध करना।
- छोटे और सरल संदेशों को तैयार करना।
- स्थानीय संचार माध्यमों (प्रशिक्षण, पाठ्यक्रम, स्थानीय रेडियो, बाजार की छोटी दुकानें, ग्रामीण सभा, धार्मिक स्थल) की पहचान करना।
- संदेश को संचारित करने के लिए संचार सामग्री (विज्ञापन, प्रदर्शन, पुस्तिका, नियमावली) को प्रस्तुत और परिभाषित करना।
- सभी आवश्यक साधनों, संचार तंत्र तथा प्रशिक्षण कला को सुनिश्चित करना।

चरण 5: प्रशिक्षण की रूपरेखा बनाना।

- समाज/समुदाय को क्या, कैसे कहाँ और कब सीखना चाहिए की सूची बनाना।
- प्रत्यक्ष प्रशिक्षण की रूपरेखा बनाना तथा उसे कार्यान्वित करना और प्रशिक्षकों को आगे प्रोत्साहन के लिए प्रशिक्षित करना।
- पोषण ज्ञान तथा संचारण को सरल बनाने के लिए आवश्यक सामग्री का वितरण करना।

चरण 6: पोषण सम्बन्धी विषयों/प्रसंगों के प्रसारण का प्रबोधन तथा मूल्यांकन करना।

- यदि प्रक्रिया अपेक्षाओं व जरूरतमंद समुदाय की समस्याओं के अनुसार सम्पन्न हो गयी हो तो समुदाय के लोगों से मिलकर, समुदाय में उत्पन्न संदेहों तथा प्रश्नों का जवाब देना।

1.6 सफल पोषण ज्ञान के नियम

1. पोषण सम्बन्धी समस्याओं की स्पष्ट सूची उपलब्ध कराना। पोषण समस्या के विस्तार और प्रकार को जानने के लिए सम्बन्धित मूल्यांकन क्रिया विधि जैसे पोषण सर्वेक्षण, केन्द्रित समूह चर्चा अथवा समुदाय साक्षात्कार को प्रयोग में लाना।
2. सन्देश का निर्माण करते समय यह ध्यान रखना कि वे छोटे और सरल हों और स्पष्ट तथा विश्वसनीय जानकारी प्रदान करने वाले हों। पोषण सम्बन्धी समस्या, इसके कारणों तथा सम्बन्धित व्यवहार के सम्बन्ध बनाने वाले हों। स्थानीय अभिव्यक्तियों का प्रयोग करें।
3. जनता को पोषण सम्बन्धी समस्याओं के बारे में जानने तथा समझने के लिए प्रेरित करें। शुरु की कुछ सभाओं और प्रशिक्षण बैठकों के दौरान महत्वपूर्ण विषयों को परिचित करवाने के लिए सामग्री प्रदान करें और फोटो खींचें।
4. अपने पास प्रदर्शित करने के लिए कुछ सहायक सामग्री रखें। वास्तविक वस्तुएं जैसे खाद्य पदार्थ तथा बर्तन जिसे लोग प्रयोग में लाते हैं, चित्रों तथा विज्ञापनों से बेहतर होते हैं क्योंकि ये सैद्धान्तिक संदेश को अधिक व्यवहारिक बनाते हैं तथा उपयोग को सरल कर देते हैं।
5. दर्शकों को भाग लेने के लिए प्रेरित करें- उनसे प्रश्न पूछने के लिए तथा महत्वपूर्ण विषयों/प्रसंगों की विवेचना/विचार विमर्श करने के लिए कहें।
6. पोषण ज्ञान सभाओं की समीक्षा/पुनरावलोकन करने के लिए दर्शकों से प्रश्न पूछें। जितने ज्यादा लोग सक्रिय रूप से भाग लेंगे उतना ही संदेश व्यवहार में आयेगा।
7. एक ही व्यक्ति या समूह को एक ही संदेश पहुँचाने/प्रसारित करने के लिए विभिन्न संचारण माध्यमों द्वारा पोषण ज्ञान के रीति, ढंग तथा साधनों का प्रयोग करें। यह पद्धति समाज में पोषणीय सुधार में सबसे अधिक प्रभावशाली सिद्ध हुई है।

पोषण ज्ञान के अन्तर्गत ग्राही/जनता/समूहों को पोषण के महत्व के बारे में समझाना, शैक्षिक सामग्री प्रदान करना जो स्वस्थ खाद्य व्यवहार के संदेश को मजबूत करे तथा उस व्यवहार को अपनी दैनिक दिनचर्या में शामिल करवाया जाता है। पोषण ज्ञान प्रदान करने से पहले यह जान लेना जरूरी है कि वे पोषण के बारे में क्या जानते हैं तथा नये खाद्य व्यवहार को अपनाने के लिए कितने तैयार हैं? इस व्यवहार को अपनाने में या सीखने में कोई भी समस्या जैसे भाषा सम्बन्धी समस्या आ रही है तो उसे दूर करना चाहिए।

1.6.1 पोषण ज्ञान सामग्री तैयार करने से पहले कुछ मुख्य बातें

- पोषण ज्ञान प्रदान करते समय कर्तावाचक शब्दों का प्रयोग करना चाहिए।
- चिकित्सकीय शब्दों का प्रयोग करने की बजाय साधारण भाषा का प्रयोग करना चाहिए।
- मुख्य धारणाओं का सचित्र वर्णन करना चाहिए।

- लिखित सामग्री में अनुच्छेद छोटे होने चाहिए।
- जब भी संभव हो, प्रसंग के बारे में चर्चा करनी चाहिए तथा श्रोताओं को इन कार्यक्रमों में (खाली स्थान भरो, प्रश्न इत्यादि का प्रयोग करके) भाग लेने के लिए प्रोत्साहित करना चाहिए।

पोषण ज्ञान प्रदान करने के कई तरीके हैं जैसे-

संचारक - ग्राही

अध्यापक (शिक्षक) - छात्र (शिष्य)

स्रोत - शिक्षा को ग्रहण करने वाला श्रोता/दर्शक

- सामान्यतः ज्ञान स्रोत से ग्राही की ओर प्रवाहित होता है। (स्रोत - ग्राही)
- ग्राही संकेतों, अभिव्यक्ति या शब्दों में अपनी प्रतिक्रिया प्रदान करता है। इस प्रकार से ज्ञान द्विपथ प्रक्रिया बन जाता है।
- जो प्रदान किया जाता है, वह संदेश होता है। उसी संदेश के माध्यम से ज्ञान प्रदान किया जाता है।

अभ्यास प्रश्न 1

1. रिक्त स्थान भरिए।
   a. गर्भवती महिलाओं और धात्री माताओं में लौह लवण, फोलिक ऐसिड और ..... की कमी के कारण एनीमिया रोग पाया जाता है।
   b. उचित चुनाव, स्वच्छ भोजन का उपभोग तथा उचित पाक प्रक्रिया, …….. के प्रोत्साहन में सहायता करते हैं।
   c. पोषण सम्बन्धी विषय/प्रसंग, संदेश तथा संचारण माध्यम व सामग्री की योजना बनाना, पोषण ज्ञान सम्बन्धी क्रियाओं की योजना बनाने और उनको क्रियान्वित करने का ..... मुख्य चरण है।
   d. पोषण समस्या के विस्तार और प्रकार को जानने के लिए सम्बन्धित मूल्यांकन क्रिया विधि जैसे पोषण सर्वेक्षण, केन्द्रित समूह चर्चा अथवा समुदाय साक्षात्कार को प्रयोग में लाना..... का पहला नियम है।
   e. पोषण ज्ञान प्रदान करते समय कर्तावाचक शब्दों का प्रयोग करना चाहिए।

1.7 पोषण ज्ञान की प्रक्रिया

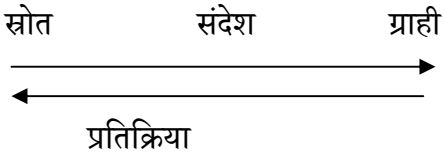

पोषण ज्ञान प्रदान करने की निम्न विधियाँ हैं-

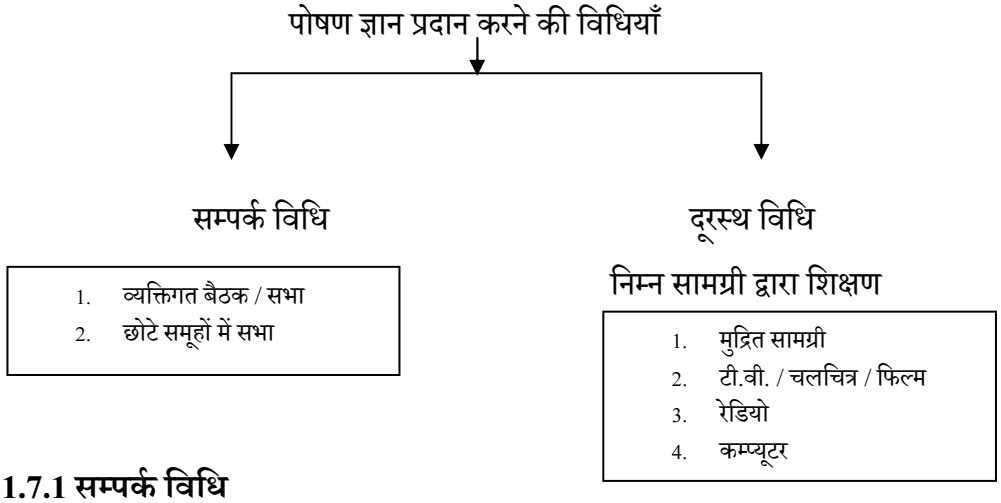

1.7.1 सम्पर्क विधि

इस विधि की प्रमुख विशेषता यह है कि स्रोत ग्राही से अकेले या छोटे समूह में मिलता है। इससे दोनों के बीच दृष्टि सम्पर्क स्थापित होता है। यह प्रभावी अध्ययन तथा ज्ञान ग्रहण करने में सहायता करता है। दोनों आपस में प्रश्न पूछ सकते हैं तथा अपने संदेहों को दूर कर सकते हैं। इस विधि का लाभ यह है कि स्रोत ग्राही की आवश्यकतानुसार संदेश को दोहरा सकता है तथा परिस्थिति के अनुसार परिवर्तित भी कर सकता है जिससे ग्राही को संदेश ग्रहण करने में कोई कठिनाई नहीं होती तथा वह आसानी से संदेश को प्राप्त करके, अपने व्यवहार में क्रियान्वित कर सकता है। इस प्रकार से वह अपने व्यवहार में परिवर्तन ला सकता है।

(1) व्यक्तिगत सभा

इस विधि से स्रोत ग्राही से अकेले मे मिलकर संदेश प्रदान करता है। ग्राही से अकेले में मिलकर ज्ञान प्रदान करने के कई लाभ हैं। स्रोत यह निष्कर्ष निकाल सकता है कि ग्राही ज्ञान ग्रहण कर रहा है या नहीं? यदि नहीं तो स्रोत उसी समय अपनी नीति में बदलाव लाकर, ग्राही के अनुसार/उसके स्तर के अनुसार उसे समझा सकता है। ग्राही को भी अगर कोई संदेह है तो वह स्रोत से कोई भी प्रश्न पूछकर अपने संदेहों को दूर कर सकता है तथा संदेश को सही रूप से ग्रहण कर सकता है। स्रोत भी संदेश को

पुष्ट कर ग्राही को प्रदान करके उसके व्यवहार में बदलाव लाने के लिए समझा सकता है। एक लाभ यह भी है कि ग्राही समूह में प्रश्न करने में हिचकिचा सकता है परन्तु अकेले में वह कोई भी प्रश्न पूछ सकता है तथा अपनी परिस्थिति के अनुसार उसको बदलवाकर ग्रहण कर सकता है। इस विधि द्वारा यह ज्ञात किया जा सकता है कि कितने लोग ज्ञान प्राप्त कर रहे हैं तथा कहाँ/किस स्तर पर उन्हें संदेश ग्रहण करने में या क्रियान्वित करने में समस्या का सामना करना पड़ रहा है। स्रोत यह निर्धारित कर सकता है कि संदेश मे कहाँ बदलाव लाया जा सकता है जिससे ग्राही को पोषण ज्ञान प्राप्त करने में आसानी हो।

परन्तु इस विधि की हानि यह है कि इसमें समय का उपभोग ज्यादा होता है तथा सिखाने के लिए ज्यादा व्यक्तियों (स्रोत) की आवश्यकता होती है क्योंकि प्रत्येक स्रोत को ग्राही से अकेले में मिलना पड़ता है।

व्यक्तिगत सभायें प्रायः ''घर'' पर आयोजित की जाती हैं और इसलिए इन्हें ''गृह दौरा'' कहा जाता है। ऐसी सभायें सीखने वाले (ग्राही) के लिए सुविधाजनक तथा अनौपचारिक होती हैं।

(2) छोटे समूहों की सभा

छोटे समूहों में ग्राही से मिलना, व्यक्तिगत सभा एक अच्छा विकल्प है। छोटे समूहों में सभा के लाभ व्यक्तिगत सभा की तरह ही है। स्रोत तथा ग्राही आमने सामने होते हैं तथा एक दूसरे के दृष्टि सम्पर्क में रहते हैं। वे एक दूसरे से प्रश्न पूछ सकते हैं तथा संदेह भी दूर कर सकते हैं। संदेश को आवश्यकता तथा परिस्थिति के अनुसार परिवर्तित भी किया जा सकता है। व्यक्तिगत सभा की अपेक्षा कम समय उपभोगी है। इस विधि का अन्य लाभ यह है कि जब सदस्य अपने अनुभवों को बाँटते हैं तो इसका एक दूसरे पर सकारात्मक प्रभाव पड़ता है। संदेश बिना किसी या कम प्रतिपादन के साथ स्वीकृत हो जाता है।

परन्तु इस विधि की हानि यह है कि यदि ग्राही शान्त तथा संकोची प्रवृत्ति का है तो वह उन लोगों की उपस्थिति में, जो ज्यादा बोलते हैं, अपने संदेहों को दूर नहीं कर पाता तथा उसे यह भी डर रहता है कि अन्य लोग उसका मजाक बनायेंगे।

छोट समूहों में ज्ञान प्रदान करने के अच्छे परिणाम के लिए एक समूह में 30 से ज्यादा लोग नहीं होने चाहिए। जितना छोटा समूह होगा उतना ज्यादा स्त्रोत तथा ग्राही के बीच सम्पर्क होगा तथा जितना बड़ा समूह होगा, स्त्रोत तथा ग्राही के बीच उतना ही कम सम्पर्क होगा। परिणामस्वरूप बड़े समूह में ज्ञान का प्रसार कम प्रभावी होगा।

व्यक्तिगत तथा समूह में पोषण ज्ञान प्रदान करते हुए निम्न का प्रयोग किया जा सकता है:

- व्याख्यान
- रेखाचित्र
- रेडियो

- विचार विमर्श
- वाद/विवाद
- प्रदर्शन
- मुद्रांकन
- नमूने
- नाटक
- अनुभव
- चलचित्र
- टी.वी
- कम्प्यूटर
- भूमिका निर्वाहन

इनमें से किसी का भी प्रयोग करने से पहले, सदैव तैयारी करनी चाहिए जैसे जिस विषय पर ज्ञान प्रदान करना हो, उसका पहले परिचय प्रदान करना चाहिए। इससे ग्राही संदेश को ग्रहण करने के लिए तैयार होता है कि उसे किस विषय पर ज्ञान प्राप्त करना है। प्रदर्शन को रोचक बनाने के लिए हमेशा संसर्ग में विधियों का प्रयोग करना चाहिए तथा सभा समाप्त करने से पहले उसी प्रसंग पर चर्चा या वाद विवाद करना चाहिए। इससे यह पता चला जाता है कि संदेश यथार्थता के साथ ग्राही के पास पहुँच गया है या नहीं अर्थात् जो संदेश जिस उद्देश्य के साथ प्रसारित किया गया था वह उसी के साथ पहुँचा है या नहीं। इससे स्रोत को ज्ञान प्रदान करने में तथा ग्राही को ज्ञान प्राप्त करने में रोचकता का अनुभव होता है तथा पुष्टता होती है और आत्मविश्वास भी बढ़ता है।

क्रिया

(क) 40 मिनट की सभा में 20 मिनट के चलचित्र प्रदर्शन की रूपरेखा बनानी चाहिए।

(ख) टी.वी. पर चर्चा/विचार विमर्श कार्यक्रम देखकर निम्न पर टिप्पणी करनी चाहिए।

- परिचय
- प्रदर्शन
- संक्षिप्त विवरण

क्या आपको कार्यक्रम प्रभावी लगा और क्यों?

(ग) स्त्रोत का अवलोकन करके यह जानना चाहिए कि प्रदर्शन किस चीज की वजह से प्रभावी बना है तथा और ज्यादा प्रभावी बनाने के लिए क्या किया जा सकता है?

1.7.2 दूरस्थ विधि

टी. वी., रेडियो, मुद्रित सामग्री तथा चलचित्र द्वारा आप व्यक्तियों तक कितनी भी दूर से पहुँच सकते हैं या सम्पर्क स्थापित कर सकते हैं। इस प्रकार से एक ही समय पर, विभिन्न स्थानों पर अनेक व्यक्तियों से सम्पर्क किया जा सकता है।

रेडियो पर समाचार सुनते समय या टी. वी. पर फिल्म देखते समय महसूस किया जा सकता है कि बहुत से अन्य लोग भी वही कार्यक्रम उसी समय सुन या देख रहे होंगे। कार्यक्रम की तैयारी में एक ही बार धन खर्च किया जाता है और उसी से दुनिया के बहुत सारे व्यक्तियों को बार-बार ज्ञान प्रदान

किया जाता है। जितने ज्यादा लोग उस कार्यक्रम को देखेंगे या सुनेंगे, उतना ही वह ज्ञान कम खर्च वाला तथा अनौपचारिक होगा।

इस विधि का प्रयोग करके आवश्यक रूप से बहुत सारे व्यक्तियों तक पहुँचा जा सकता है परन्तु जब तक विचार आदान प्रदान करने वाला टी. वी. न हो, उन लोगों तक प्रत्यक्ष रूप से नहीं पहुँचा जा सकता है/सम्पर्क किया जा सकता है। प्रतिक्रिया तब पहुँचेगी जब उनसे उस कार्यक्रम के बारे में लिखने को कहा जायेगा। यदि आचार प्रदारक टी. वी. की सुविधा उपलब्ध होती है तो स्रोत ग्राही से प्रत्यक्ष रूप से चलचित्र कैमरे, टेलीफोन अथवा फैक्स द्वारा जुड़ सकता है। यह सम्बन्ध एक पथ गामी या द्विपथ गामी हो सकता है परन्तु यह इस बात पर निर्भर करता है कि दोनों किस प्रकार से जुड़े हुए हैं।

यह संचार की विधि कम लागत वाली है क्योंकि इसके द्वारा कम समय में बहुत सारे लोगों को ज्ञान प्रदान किया जा सकता है। लेकिन यह विधि उतनी अनुनयी नहीं है जितनी कि व्यक्तिगत/छोटे समूहों की सभा। लोगों को अपने व्यवहार को बदलने तथा नयी चीजों को सीखने और ग्रहण करने के लिए स्रोत को संदेश को बार-बार दोहराना चाहिए।

दो, तीन या चार लोगों को निमंत्रण देकर रेडियो का प्रयोग करते समय साक्षात्कार का आरूप अपनाया जा सकता है। संदेश प्रदान करने के लिए नाटक का भी प्रयोग किया जा सकता है। यदि टी.वी./चलचित्र/फिल्म का प्रयोग किया जा रहा है तो दृढ़ कहानी रेखा के साथ नाटक का या बहुत सारे चित्रों/नमूनों/प्रदर्शन के साथ सीधी बात का भी प्रयोग किया जा सकता है।

बाजार में पोषण ज्ञान पर बहुत सारी वीडियों फिल्म होती हैं यदि उनको प्रदर्शित किया जाता है तो उन पर मजबूत पकड़ होनी चाहिए या स्वयं भी पोषण ज्ञान से सम्बन्धी वीडियो फिल्म बनायी जा सकती है।

समूह से सम्पर्क करते समय निम्न आवश्यक बातों को ध्यान में रखना चाहिए:

- श्रोताओं/दर्शकों में रुचि जागृत करनी चाहिए। दर्शकों को संदेश ग्रहण करने के लिए मनोवैज्ञानिक रूप से तैयार करना चाहिए। उन्हें प्रसारण का समय तथा कार्यक्रम की विषयवस्तु तथा सारांश पहले से ही बताना चाहिए।
- कार्यक्रम को चलाकर उन्हें सुनवाना चाहिए।
- कार्यक्रम से सम्बन्धित प्रश्नों को पूछना चाहिए, इससे श्रोताओं/दर्शकों को सोचने में सहायता मिलती है।
- कार्यक्रम के बारे में प्रतिक्रिया तथा समस्याओं के सुझावों को आमंत्रित करना चाहिए।

मुद्रित सामग्री (किताबें, अखबार, पत्रिका इत्यादि) के माध्यम द्वारा अध्यापन के महत्व से तो सभी परिचित ही हैं परन्तु आधुनिक कम्प्यूटरों तथा सॉफ्टवेयर कार्यक्रमों ने सीखने की प्रवृत्ति को बढ़ावा दिया है।

क्रिया

रेडियो या टी.वी. पर कुछ शिक्षण कार्यक्रमों को सुनकर/देखकर तथा उनको यहाँ पर दी गयी तालिका के अनुसार वर्गीकृत कीजिए।

कार्यक्रम का नाम	**टी.वी. या रेडियो**	**कार्यक्रम का प्रकार**	**सूचित किया गया संदेश**	**टिप्पणी**
		साक्षात्कार विचार विमर्श बातचीत नाटक		

1.8 पोषण ज्ञान के पूर्वायोजन

शोध खोजों द्वारा प्राप्त जानकारी के अनुसार पोषण ज्ञान प्रदान करते समय कुछ बातों का ध्यान रखना चाहिए।

- आघात व्यवहार (दुपहिया वाहन चलाते समय हैलमेट न पहनने से घातक क्षति का सामना करना पड़ सकता है), सभ्य पहुँच (दुपहिया वाहन चलाते समय हैलमेट पहनना चाहिए) से ज्यादा प्रभावी होता है।
- किसी कार्यक्रम को सिर्फ सुनने की बजाय उसमें भाग लेकर उसे ज्यादा अच्छे से समझा जा सकता है।
- नकारात्मक पहुँच (धूम्रपान करने के हानिकारक प्रभाव होते हैं) ज्यादा प्रभावी होती है।

आपको टी. वी. पर धूम्रपान, शराब तथा मादक पदार्थों का सेवन करने से स्वास्थ्य पर पड़ने वाले हानिकारक प्रभाव अथवा दुपहिया वाहन का प्रयोग करते समय हैलमेट का प्रयोग करना चाहिए बताने वाले विज्ञापनों के बारे में याद है । ये सब नकारात्मक प्रस्ताव का प्रयोग करते हैं। जैसे जो व्यक्ति धूम्रपान करेगा, उसकी धूम्रपान न करने वालों की अपेक्षा जल्दी मृत्यु होगी तथा जो दुपहिया वाहन चलाते समय हैलमेट का प्रयोग नहीं करेगा, वह घातक सिर - क्षति का शिकार होगा।

1.9 पोषण ज्ञान प्रदान करने हेतु उपयुक्त स्थान

पोषण ज्ञान निम्न स्थानों पर प्रदान किया जा सकता है-

- घर
- अस्पताल
- पंचायत घर/चौपाल/ग्रामीण जल स्थल
- विद्यालय/कॉलेज
- कल्याणकारी केन्द्र
- महिला मण्डल सभा
- सभा स्थल
- समुदाय स्थल
- बगीचा

इन सभी स्थानों पर लोगों को सूचना प्राप्त होती है। घर पर सभी अपने कार्यों में व्यस्त रहते हैं जिनमें से खाना पकाना प्रमुख क्रिया है जबकि इन स्थानों पर ये सिर्फ ज्ञान प्राप्त करने पर ध्यान देंगे। किसी भी गृहकार्य क्रिया का प्रदर्शन, समूह ज्ञान प्राप्ति का अच्छा उदाहरण है। गाँवों में समूह ज्ञान प्रदान करने के लिए बगीचा या पंचायत घर उपयुक्त है। यहाँ पर एक साथ समूह को ज्ञान प्रदान किया जा सकता है। पोषण ज्ञान कार्यक्रमों को उपर्युक्त स्थानों में से किसी पर भी चलाया जा सकता है।

क्रिया

- लक्ष्य समूह को पहचानकर उन्हें अच्छी तरह से जानना चाहिए। लक्ष्य समूह उन लोगों का समूह है जिनको सबसे ज्यादा पोषण ज्ञान की आवश्यकता होती है। उनकी आवश्यकताओं, समस्याओं, वित्तीय स्तर, शैक्षिक स्तर, सामर्थ्य तथा कमजोरियों को जानना आवश्यक है। ये सब चीजें संदेश, पोषण ज्ञान का प्रकार तथा उचित सामग्री को सही तरीके से चुनने में सहायता करेंगी।
- अपने विषय पर पकड़ मजबूत करनी चाहिए। अगर आप अपने विषय में प्रवीण हैं तो आप अपने विषय को प्रभावशाली तरीके से समझा सकते हैं। इसलिए पोषण ज्ञान प्रदान करने से पहले, कम से कम निम्न प्रसंगों में प्रवीणता प्राप्त करनी चाहिए।

1. पोषक तत्व तथा हमारे शरीर में उनके कार्य
2. प्रत्येक पोषक तत्व का स्रोत
3. पर्याप्त भोजन की धारणा तथा उनकी योजना
4. भोजन के पोषक मूल्य
5. कुपोषण से होने वाले रोग, लक्षण तथा पूर्व निवारक उपाय
6. विभिन्न आयु वर्ग की भोजन सम्बन्धी आवश्यकताएँ
7. उच्चतम पोषण बनाये रखने के लिए उपयुक्त भोजन पकाने की विधि
8. बिना कीमत बढ़ाये, भोजन के पोषण मान में वृद्धि करना
9. उचित पोषण सम्बन्धी व्यवहार

10. संवेदनशील समूह (गर्भवती तथा धात्री महिलाएँ, शिशुओं तथा बच्चों) की पोषण सम्बन्धी आवश्यकताएँ
11. लौह लवण, विटामिन ए, प्रोटीन और ऊर्जा की कमी से होने वाले रोगों की स्थिति
12. स्थानीय पोषण सम्बन्धी समस्याएं, खाद्य व्यवहार तथा उपलब्ध खाद्य साधन

- पोषण सम्बन्धी संदेश पहुँचाने की बहुत सारी विधियाँ हैं। प्रत्येक विधि की अपने लाभ तथा हानियाँ हैं। विधि का चुनाव, टी.वी., रेडियो, चलचित्र, किताब या पुस्तिका की सुलभता/उपलब्धता पर निर्भर करता है।
- उपयुक्त सहायक सामग्री का प्रयोग करना चाहिए। सहायक सामग्री कुछ भी हो सकती है जो निर्विघ्न तथा प्रभावी संचार में सहायता करती हो। चाहे यह कोई नक्शा, विज्ञापन, लेखाचित्र, फलालेन लेखाचित्र (Flannel board), नमूना, वास्तविक नमूना, नाटक, प्रदर्शन, टी.वी./चलचित्र/फिल्म कार्यक्रम इत्यादि हो। इनमें से कुछ को बनाया जा सकता है तथा अन्य को प्राप्त किया जा सकता है। इनके चुनाव तथा प्रयोग में ध्यान रखना चाहिए।

सहायक सामग्री निम्न प्रकार है-

लेखाचित्र

नक्शा, विज्ञापन, रेखाचित्र, चित्र, फलालेन लेखाचित्र तथा फ्लैश कार्ड सभी इसी वर्ग में आते हैं। लेखाचित्र की निम्न विशेषताएँ हैं:

1. ये द्विविस्तारीय होते हैं- चित्र, आलेख, शब्द तथा आकृति का विस्तृत प्रयोग करना चाहिए।
2. आसानी से बनने वाले तथा सस्ते होने चाहिए।
3. प्रयोग में आसान होने चाहिए।
4. वहन करने में सुलभ होने चाहिए।
5. ध्यान आकर्षित करने वाले तथा ग्राही को जो संदेश प्रदान किया जा रहा है उस पर एकाग्रित करने वाले होने चाहिए।

लेखाचित्र स्वयं बनाये जा सकते हैं। समूह से बात करते समय भी लेखाचित्र बनाये जा सकते हैं। फ्लैश कार्ड तथा फलानेन लेखाचित्र विशेष रूप से बच्चों तथा निरक्षर लोगों के लिए उपयुक्त होते हैं।

नमूने

ये वास्तविक वस्तु की उसी रूप में, छोटे या बड़े पैमाने पर प्रतिकृति होती है। संतरे का नमूना बिल्कुल संतरे की तरह दिखता है विशेष रूप से उसका आकार, आकृति तथा रंग बिल्कुल वास्तविक संतरे की तरह होते हैं। नमूनों से अच्छी तथा प्रभावी रूप से ज्ञान प्रदान किया जा सकता है

क्योंकि वे बिल्कुल वास्तविक वस्तु की तरह दिखते हैं तथा ग्राही उन्हें आसानी से पहचान सकता है। अगर वास्तविक वस्तुओं के नमूने उपलब्ध हों तो उनका प्रयोग करना चाहिए। फलों, पेड़ों पौधों, पत्तियों तथा पके हुए भोजन का प्रयोग किया जा सकता है।

प्रदर्शन

इसका अर्थ है कि प्रक्रिया का प्रस्तुतीकरण किया जाए। यदि दर्शक/ग्राही को यह सिखाना है कि हरी सब्जियों को काटने से पहले धो लेना चाहिए तो आप वास्तव में एक बाल्टी में पानी भरकर उसमें पालक को धोकर दिखा सकते हैं तथा उसके बाद काट सकते हैं। पानी फेंकने से पहले बाल्टी में पालक के धोने से उत्पन्न गंदगी/धूल को दिखाया जा सकता है। दर्शकों/श्रोताओं को समझाया जा सकता है कि हरी सब्जियों को काटने से पहले धो लेना चाहिए। अन्य तरीके जैसे दालों को अंकुरित करके दिखाया जा सकता है। यह भी दिखाया जा सकता है कि कैसे अनाज, दाल और पालक से पौष्टिक रोटी तथा खिचड़ी बनायी जा सकती है। समूह को इन चीजों को चखवाकर उनकी प्रतिक्रिया भी जानी जा सकती है।

1.10 पोषण ज्ञान की योजना

अगर आपको बच्चों को यह बताना है कि हरी सब्जियाँ रोज खानी चाहिए तो आप कैसे बताएंगे?

समस्या - बच्चों को रोज़ हरी सब्जियाँ खाने के महत्व के बारे में बताना

लक्ष्य समूह - 5-12 साल के बच्चे

आवश्यकता - बच्चों को समझाना कि विटामिन ए, लौह लवण तथा कैल्शियम की आपूर्ति उनके स्वस्थ रहने के लिए आवश्यक है और ये सब पोषक तत्व हरी सब्जियों में उपस्थित होते हैं।

समय - एक सप्ताह (1-2 घण्टे, प्रतिदिन)

1.11 पोषण ज्ञान का मूल्यांकन

पोषण ज्ञान का मूल्यांकन द्विस्तरीय होता है। पोषण ज्ञान प्रदान करने से पहले तथा पोषण ज्ञान प्रदान करने के बाद। पोषण ज्ञान प्रदान करने से पहले, समुदाय के ज्ञान का मूल्यांकन किया जाता है कि उस समुदाय के लोगों को खाद्य व्यवहार तथा पोषण के बारे में कितनी जानकारी है? यह मूल्यांकन प्रश्नावाली के द्वारा होता है जिसमें पोषण, स्वास्थ्य तथा खाद्य व्यवहार से सम्बन्धित कुछ प्रश्न होते हैं जो बहुविकल्पीय, एक शब्दीय तथा लघु उत्तरीय हो सकते हैं। इस प्रश्नावली को पहले जाँच लिया जाता है कि जो जानकारी हमें चाहिए वह इन प्रश्नों से मिलेगी या नहीं? इसके बाद प्रश्नावली को समुदाय से भरवाया जाता है यह निम्न प्रकार से हो सकता है-

1. व्यक्तिगत रूप से- इस विधि में स्रोत प्रत्येक व्यक्ति के पास जाकर या बुलाकर उससे प्रश्नावली में लिखित प्रश्नों को एक-एक करके पूछता है तथा ग्राही जो उत्तर देता है उसे लिख दिया जाता है। इसके निम्न लाभ हैं-

1. सारे प्रश्नों के उत्तर मिल जाते है।

2. कोई प्रश्न न समझ में आने पर स्रोत ग्राही को समझा सकता है, इससे गलत उत्तर की संभावना कम हो जाती है।

3. यह अधिक परिशुद्ध होता है, परन्तु यह विधि समय उपभोगी है।

2. समूह में- स्रोत व्यक्तियों को समूह में बुलाकर प्रश्नावाली में लिखित प्रश्नों को पढ़ता है तथा उसके नीचे दिये गये रिक्त स्थान में या सही विकल्प पर निशान लगाकर उत्तर देने को कहता है। इसका लाभ यह है कि यह विधि कम समय उपयोगी है परन्तु यह उतना परिशुद्ध नहीं है जितना कि व्यक्तिगत रूप वाली विधि।

इन विधियों से प्रश्नावली को भरवाकर यह अवलोकन किया जाता है कि समुदाय को स्वास्थ्य तथा पोषण के बारे में कितनी जानकारी है? इस निष्कर्ष के आधार पर पोषण ज्ञान के प्रसंगों को तैयार किया जाता है तथा इन पर विशेष ध्यान दिया जाता है तथा पोषण ज्ञान प्रदान करने के बाद, प्रश्नावली के प्रश्नों में थोड़ा बदलाव लाकर दोबारा से प्रश्नावली को भरवाया जाता है। इसके बाद यह देखा जाता है कि समुदाय के पोषण सम्बन्धी ज्ञान में कितना सकारात्मक परिवर्तन आया है।

उदाहरणार्थ

उदाहरण 1

यदि एक समुदाय को पोषण ज्ञान प्रदान करना है तो पहले प्रश्नावली (जिसमें भोजन, पोषण तथा स्वास्थ्य सम्बन्धी प्रश्न दिये गये हैं) को भरवाया जाता है। प्रश्नावली का अवलोकन करने पर यह ज्ञात होता है कि समुदाय को 'सन्तुलित आहार, भोज्य समूह, पोषक तत्व तथा पोषण के बारे में जानकारी नहीं है। वे नहीं जानते कि उन्हें क्या खाना चाहिए तथा उनकी पोषण सम्बन्धी आवश्यकताएँ क्या हैं? बच्चों को किस पोषक तत्व की ज्यादा आवश्यकता होती है? किशोरियों तथा महिलाओं में किस पोषक तत्व की कभी अक्सर देखी जाती है तथा किस भोजन/खाद्य पदार्थ खाने से किस पोषक तत्व की प्राप्ति होती है तथा उसके हमारे शरीर में न होने से कौन सी बीमारी होती हैं और उसके क्या लक्षण हैं? वृद्धों को अपने आहार में क्या शामिल करना चाहिए इत्यादि।

इससे यह निष्कर्ष निकलता है कि सभी को पोषण ज्ञान प्रदान करने की आवश्कता है ताकि वे अपनी पोषण सम्बन्धी आवश्यकताओं के बारे में जानकर उनकी पूर्ति कर सकें तथा स्वस्थ्य जीवन का लाभ उठा सकें।

इसके लिए निम्न प्रकार से पोषण ज्ञान प्रदान की किया जा सकता है।

1. व्याख्यान तथा समूह चर्चा

2. सचित्र पुस्तिका

3. वीडियो फिल्म

4. भोज्य विधियों का प्रदर्शन

1. व्याख्यान तथा समूह चर्चा

निम्न प्रसंगों पर व्याख्यान दिया जा सकता है-

- बच्चों, नवयुवकों, किशोरों, किशोरियों तथा वृद्धों के लिए खाद्य पदार्थ तथा उनकी उचित मात्रा
- भोजन के कार्य तथा भोज्य समूह
- विभिन्न पोषक तत्व तथा उनके स्त्रोत
- विभिन्न पोषक तत्वों की कमी से होने वाले रोग व समस्याएँ
- संतुलित आहार का महत्त्व
- विभिन्न आयु वर्ग के लिए कुछ विशेष तत्व तथा उनके स्रोत जैसे किशोरियों को लौह लवण की विशेष आवश्यकता होती है तथा यह पालक, मेथी, चौलाई, पुदीना, गुड़, तिल इत्यादि में प्रचुर मात्रा में पाया जाता है।

समुदाय को 20-20 के समूह में बाँटकर व्याख्यान दिया जा सकता है। प्रत्येक प्रसंग पर 15-20 मिनट का व्याख्यान दिया जा सकता है। हर व्याख्यान के बाद चर्चा होनी चाहिए क्योंकि चर्चा से व्याख्यान की सार्थकता का पता चल जाता है तथा अगर किसी को कोई संदेह हो तो चर्चा से यह दूर भी हो जाता है।

2. वीडियो फिल्म

वीडियो फिल्म इस विषय पर बनायी जा सकती है कि ''स्वस्थ तथा सफल जीवन कैसे प्राप्त करें?'' कहानी कुछ इस प्रकार से हो सकती है कि राम का परिवार सही समय पर संतुलित आहार लेता है जिसमें सभी भोज्य वर्ग के खाद्य पदार्थ शामिल होते हैं तथा श्याम का परिवार फास्ट फूड पर अपना जीवन व्यतीत करता है तथा उनके खाने का भी कोई समय निर्धारित नहीं है। राम का परिवार जो संतुलित आहार को सही समय पर लेता है वह हष्ट-पुष्ट, स्वस्थ तथा सफल जीवन व्यतीत करता है तथा श्याम का परिवार जो फास्ट फूड पर अपना जीवन व्यतीत करता है वह प्रायः विभिन्न रोगों का शिकार रहता है तथा इसी वजह से अपने कार्य भी ढंग से नहीं कर पाता। राम के परिवार को देखकर

श्याम के परिवार ने उनके अच्छे स्वास्थ्य का कारण पूछा और उसके बाद उन्होंने भी निश्चित समय पर संतुलित आहार लेना शुरु किया और स्वस्थ तथा सफल जीवन प्राप्त किया।

3. सचित्र पुस्तिका

पुस्तिका का नाम ''आइये आपके स्वास्थ्य की बातें करें'' रखा जा सकता है। इस पुस्तिका में भोज्य समूह के चित्र तथा उनका वर्णन हो सकता है। संतुलित आहार के अन्तर्गत कौन-कौन से भोज्य पदार्थ आते हैं, किस आयु में किस तरह के भोज्य पदार्थ को आहार में शामिल किया जाता है तथा उस भोज्य पदार्थ की आवश्यकता कितनी होती है? सन्तुलित आहार की कमी से भिन्न आयु वर्गों में कौन-कौन से रोग प्रचलित हैं तथा उनके लक्षण क्या हैं? जैसे बच्चों में प्रोटीन तथा ऊर्जा की कमी के कारण प्रोटीन कैलोरी असंतुलन रोग व्यापक होता है, इसके क्या लक्षण हैं तथा कौन से भोज्य पदार्थों को खाकर इसको दूर किया जा सकता है इत्यादि को चित्र सहित प्रदर्शित किया जा सकता है।

4. भोज्य विधियों का प्रदर्शन

निम्न पौष्टिक विधियों का प्रदर्शन किया जा सकता है-

- अंकुरित दालों की चाट
- पौष्टिक दलिया
- दाल के परांठे

प्रश्नावली 1

a. सन्तुलित आहार क्या होता है?
b. सन्तुलित आहार के तत्व लिखिए।
c. आहार समूह कितने प्रकार के होते हैं?
d. आहार समूह के नाम लिखिए।
e. रक्ताल्पता (एनीमिया) से आप क्या समझते हो?
f. एनीमिया के क्या लक्षण हैं?
g. एनीमिया के क्या कारण हैं?
h. प्रोटीन कैलोरी असंतुलन क्या होता है?
i. आहार में लौह लवण के क्या स्रोत हैं?
j. किशोरियों में लौह लवण की कितनी आवश्यकता होती है?
k. आहार में आयरन के अवशोषण को रोकने वाले कौन से कारक हैं?
l. लौह लवण के अवशोषण में विटामिन सी की क्या भूमिका है?
m. रक्त में सामान्य हीमोग्लोबिन की कितनी मात्रा होती है?

n. ऊर्जा प्रदान करने वाले आहार से आप क्या समझते हैं?
o. ऊर्जा प्रदान करने वाले भोज्य पदार्थों के नाम लिखिए।
p. सुरक्षात्मक आहार से आप क्या समझते हैं?
q. सुरक्षात्मक भोज्य पदार्थों के नाम लिखिए।
r. शरीर का निर्माण करने वाले आहार से आप क्या समझते हैं?
s. शरीर का निर्माण करने वाले भोज्य पदार्थों के नाम लिखिए।
t. लौह लवण का सबसे अच्छा स्त्रोत कौन सा है?
u. आहार में हरी पत्तेदार सब्जियों का क्या महत्व है?
v. क्या आप अपना हीमोग्लोबिन स्तर जानते हैं?

उदाहरण 2

यदि एक समुदाय को पोषण ज्ञान प्रदान करने का लक्ष्य बनाया गया है तो पहले प्रश्नावली एक जिसमें पोषण तथा स्वास्थ्य सम्बन्धी प्रश्न दिये गये हैं, भरवाया जाता है। उस प्रश्नावली को उपर्युक्त दी गयी विधि से भरवाया जाता है। व्यक्तिगत रूप से भरवाने पर शुद्धता ज्यादा रहती है। प्रश्नावली का अवलोकन करने पर यह ज्ञात होता है कि गर्भवती तथा धात्री महिलाएँ अपनी पौष्टिक आवश्यकताओं के बारे में अनभिज्ञ हैं कि उन्हें क्या तथा कितनी मात्रा में खाना चाहिए। उनमें कुछ खाद्य मिथक भी प्रचलित हैं कि कुछ भोज्य पदार्थ 'ठण्डे' तथा कुछ 'गर्म' होते हैं और अगर इन्हें गर्भवती तथा धात्री महिलाएँ अपने आहार में शामिल करें तो नवजात शिशु को कुछ समस्याओं जैसे अपच इत्यादि का सामना करना पड़ सकता है। नवजात शिशुओं तथा उनके भोजन के बारे में भी कई भ्रम प्रचलित हैं। धात्री महिलाएँ अपने नवजात शिशुओं को ''कोलस्ट्रम'' (जोकि नवजात शिशुओं के लिए बहुत महत्वपूर्ण होता है) नहीं देतीं तथा सही समय पर स्तनपान न कराने की अज्ञानता के कारण, स्तपान कराने में भी देर करती हैं जिससे शिशुओं के स्वास्थ्य पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है। उन्हें पूरक आहार के बारे में भी कोई जानकारी नहीं है तथा इसकी वजह से वे पूरक आहार बनाने में भी सक्षम नहीं है, जो भोजन पूरे परिवार के लिए तैयार होता है उसी में से कुछ उनको भी खिला दिया जाता है। इन सभी से यह निष्कर्ष निकलता है कि गर्भवती तथा धात्री महिलाओं के व्यवहार में बदलाव लाने की आवश्यकता है ताकि वे अपने तथा नवजात शिशुओं की आहार सम्बधी आवश्यकताओं को पहचानें तथा उनको स्वस्थ बनायें।

इस निष्कर्ष के आधार पर पोषण ज्ञान प्रदान करने में निम्नलिखित प्रमुख प्रसंग होने चाहिए:

- गर्भवती तथा धात्री महिलाओं की पोषण सम्बन्धी आवश्यकताएँ
- शिशु पोषण व्यवहार

इसके लिए पोषण ज्ञान इस प्रकार से प्रदान किया जा सकता है।

1. व्याख्यान तथा समूह चर्चा
2. वीडियो फिल्म
3. सचित्र पुस्तिका- ''आइये माँ और बच्चों के स्वास्थ्य की बातें करें''
4. भोज्य पदार्थ विधियों का प्रदर्शन

1. व्याख्यान तथा समूह चर्चा

निम्नलिखित प्रसंगों पर व्याख्यान दिया जा सकता है-

गर्भवती तथा धात्री महिलाओं के लिए पोषण:

- गर्भवती तथा धात्री महिलाओं के लिए खाद्य पदार्थ तथा उनकी उचित मात्रा।
- उनकी कमी से होने वाले रोग तथा समस्याएँ।
- असंतुलित भोजन के कारण उत्पन्न होने वाली जटिलताएँ।
- पर्याप्त संतुलित भोजन का महत्व।
- धात्री महिलाओं के लिए कुछ विशेष भोज्य पदार्थ।

नवजात शिशुओं का आहार सम्बन्धी व्यवहार:

- शिशु के जन्म के बाद, पहली बार स्तनपान कराने का समय तथा प्रकृति/स्वरूप
- स्तनपान कराने का सही समय तथा स्तनपान का महत्व
- पूरक आहार देने की उपयुक्त आयु
- सम्पूरक आहार की प्रकृति तथा महत्व

व्याख्यान के लिए समुदाय को 20-20 के समूह में बाँटकर प्रत्येक प्रंसग को 15-20 मिनट का समय दिया जा सकता है। हर प्रसंग के व्याख्यान के बाद चर्चा होनी चाहिए क्योंकि यह चर्चा/वाद विवाद प्रेरणा तथा उत्साह बढ़ाने का कार्य करती है।

2. वीडियो फिल्म

वीडियो फिल्म का नाम कुछ इस प्रकार रखा जा सकता है जैसे ''सरला की सूनी गोद कैसे भरी?'' कहानी कुछ ऐसे हो सकती है कि सरला नामक एक गर्भवती महिला को बार बार नवजात शिशु की मृत्यु की समस्या थी। उसने इस बारे में डॉक्टर से सलाह ली तो डॉक्टर ने बताया कि बार बार नवजात शिशु की मृत्यु का कारण असंतुलित पोषण है। सरला ने डॉक्टर के अनुसार पर्याप्त पोषण लिया तथा गर्भधारण के समय पूरी देखभाल की जिससे उसको स्वस्थ/हष्ट पुष्ट नवजात शिशु का

जन्म हुआ। वह इससे बहुत प्रसन्न हुई तथा उसने अन्य महिलाओं को संतुलित आहार तथा पर्याप्त पोषण का महत्व बताया।

3. सचित्र पुस्तिका

पुस्तिका का नाम ''आइये माँ और बच्चों के स्वास्थ की बातें करें'' हो सकता है। इस पुस्तिका में स्वास्थ्य तथा पोषण सम्बन्धी चित्र हो सकते हैं जैसे संतुलित आहार के अन्तर्गत कौन-कौन से भोज्य पदार्थ आते हैं। गर्भधारण के समय किस भोज्य पदार्थ की आवश्यकता बढ़ जाती है तथा कौन से महीने में कितनी बढ़ती है?

धात्री महिलाओं की पोषण सम्बन्धी क्या आवश्यकताएँ होती हैं तथा स्तनपान के लिए उपयुक्त समय कब शुरू होता है? नवजात शिशुओं के लिए स्तनपान का क्या महत्त्व है तथा स्तनपान के साथ-साथ, 4-6 महीने के बीच कौन से तथा कितनी मात्रा में सम्पूरक आहार प्रदान किया जाता है।

4. भोज्य विधियों का प्रदर्शन

निम्न पौष्टिक विधियों का प्रदर्शन किया जा सकता है-

- बाजरा खिचड़ी
- प्रीमिक्स
- पौष्टिक लड्डू
- पोहा

प्रश्नावली में थोड़ा बदलाव लाकर उसे फिर से भरवाया जाता है तथा फिर पहले वाली प्रश्नावली से तुलना करके यह निष्कर्ष निकाला जाता है कि उनके पोषण सम्बन्धी ज्ञान में कितनी वृद्धि हुई है?

प्रश्नावली - 2

a. गर्भवती महिलाओं तथा धात्री महिलाओं की पोषण आवश्यकताएँ अन्य सभी से ज्यादा होती हैं या नहीं?
b. गर्भवती महिलाओं में साधारणतः कौन सा रोग पाया जाता है?
c. गर्भवती महिलाओं का हीमोग्लोबिन स्तर कितना होता है?
d. गर्भवती महिलाओं में लौह लवण की कितनी आवश्यकता होती है?
e. धात्री महिलाओं को किस पोषक तत्व की अधिक आवश्यकता होती है?
f. धात्री महिलाओं में कैल्शियम की आवश्यकता कितनी होती है?
g. कोलस्ट्रम क्या होता है? क्या यह नवजात शिशुओं को देना चाहिए तथा क्यों?
h. पूरक आहार क्या होता है?
i. नवजात शिशुओं में किस महीने से पूरक आहार खिलाया जाना चाहिए?

j. नवजात शिशुओं को पहली बार स्तनपान कब करवाना चाहिए?
k. सम्पूरक आहार क्या होता है?

अभ्यास प्रश्न 2

1. रिक्त स्थान भरिए।
   a. ..... विधि की प्रमुख विशेषता यह है कि स्रोत ग्राही से अकेले या छोटे समूह में मिलता है जिससे दोनों के भीच दृष्टि सम्पर्क स्थापित होता है।
   b. छोटे समूहों में ज्ञान प्रदान करने के अच्छे परिणाम के लिए एक समूह में ..... से ज्यादा लोग नहीं होने चाहिए।
   c. व्यक्तिगत सभाएं प्राय: "घर" पर आयोजित की जाती हैं, इसलिए इन्हें ..... कहा जाता है।
2. सही अथवा गलत बताइए।
   a. विद्यालय/कॉलेज, कल्याणकारी केंद्र, महिला मण्डल सभा, समुदाय स्थल आदि पोषण ज्ञान प्रदान करने हेतु उपयुक्त स्थान हैं।
   b. फ्लैश कार्ड तथा फलालेन लेखाचित्र विशेष रूप से बच्चों तथा निरक्षर लोगों के लिए उपयुक्त होते हैं।
   c. पोषण ज्ञान का मूल्यांकन द्विस्तरीय होता है।
   d. पोषण ज्ञान के मूल्यांकन हेतु उपयोग की जाने वाली समूह विधि व्यक्तिगत रूप वाली विधि से अधिक परिशुद्ध है।

1.12 सारांश

पोषण ज्ञान एक ऐसी प्रक्रिया है जिसके द्वारा व्यक्ति पोषण सम्बन्धी ज्ञान प्राप्त करते हैं तथा अपने खाद्य व्यवहार में आवश्यक परिवर्तन लाते हैं। उचित चुनाव, स्वच्छ भोजन का उपभोग तथा उचित पाक प्रक्रिया, पोषण स्तर के प्रोत्साहन में सहायता करते हैं। पोषण ज्ञान व्यक्ति को व्यक्तिगत पोषण ग्रहण का मूल्यांकन करने में, उचित भोजन का चुनाव करने में, उच्चतम पोषण प्राप्त करने के लिए सही पाक विधि का प्रयोग करने में स्थानीय भोज्य पदार्थों तथा साधनों का विवेकपूर्ण उपयोग करने में तथा ''स्वास्थ्य - सामुदायिक सम्पत्ति'' की धारणा को प्रोत्साहित करने में समर्थ बनाती है। पोषण ज्ञान के अन्तर्गत समूहों को पोषण के महत्व के बारे में समझाना, शैक्षिक सामग्री प्रदान करना जो स्वस्थ्य खाद्य व्यवहार के संदेश को मजबूत करे तथा उस व्यवहार को अपनी दैनिक दिनचर्या में शामिल करवाया जाता है। पोषण ज्ञान प्राप्त करने की कई विधियां हैं जैसे दूरस्थ तथा संपर्क विधि

तथा पोषण ज्ञान का मूल्यांकन द्विस्तरीय होता है। पोषण ज्ञान प्रदान करने से पहले तथा पोषण ज्ञान प्रदान करने के बाद।

1.13 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

अभ्यास प्रश्न 1

1. रिक्त स्थान भरिए।
   a. विटामिन B_{12}
   b. पोषण स्तर
   c. चौथा
   d. सफल पोषण ज्ञान
   e. कर्तावाचक

अभ्यास प्रश्न 2

1. रिक्त स्थान भरिए।
   a. सम्पर्क विधि
   b. 30
   c. गृह दौरा
2. सही या गलत बताइए।
   a. सही
   b. सही
   c. नहीं
   d. नहीं

1.14 निबंधात्मक प्रश्न

1. पोषण ज्ञान प्रदान करने की कौन-कौन सी विधियाँ हैं? वर्णन करें।
2. पोषण ज्ञान क्यों आवश्यक है? कोई दो कारण बताएं।
3. दूरस्थ विधि से पोषण ज्ञान प्रदान करने के लिए संचारण के चार तरीकों के नाम बताएं।
4. आप टी.वी./रेडियो कार्यक्रम को द्विपथ गामी कैसे बना सकते हैं?

(क) प्रश्न पूछकर (ख) प्रतिक्रिया पूछकर

(ग) चर्चा द्वारा (घ) उपर्युक्त सभी

5. कार्यक्रमों की उन सभी विशेषताओं पर निशान लगाइए जिससे दर्शकों पर अच्छा प्रभाव पड़ता है।

(क) सकारात्मक प्रस्ताव (ख) भद्र प्रस्ताव

(ग) नकारात्मक प्रस्ताव (घ) विनम्र प्रस्ताव

(ड) प्रघात प्रस्ताव (च) भाग लेकर

इकाई 2: भारत में पोषण सम्बन्धी समस्याएं

2.1 प्रस्तावना
2.2 उद्देश्य
2.3 भारतीय आहारों में विभिन्नता
2.4 संतुलित आहार के मुख्य अवयव
    2.4.1 अनाज
    2.4.2 दालें
    2.4.3 गिरी और तिलहन
    2.4.4 दूध
    2.4.5 मांस, मछली और अण्डे
    2.4.6 तेल और वसा
2.5 कुपोषण : परिभाषा
2.6 अल्प पोषण
    2.6.1 प्रोटीन ऊर्जा कुपोषण
    2.6.2 रक्ताल्पता अथवा एनिमिया
    2.6.3 विटामिन-ए की कमी
    2.6.4 आयोडीन अभाव जनित बीमारियाँ
2.7 बाहुल्य पोषण
    2.7.1 मोटापा
2.8 सारांश
2.9 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर
2.10 निबंधात्मक प्रश्न

2.1 प्रस्तावना

भारत में पिछले तीस वर्षों से पोषण सम्बन्धी कई सर्वेक्षण किये गये हैं। यह जानकारी दो भागों में विभक्त कर आई.सी.एम.आर. (ICMR) द्वारा प्रकाशित की गई है। पाया गया है कि भारत की अधिकांश जनता के आहार में मुख्यतः अनाज होते हैं। आहार में मुख्यतः फल और सब्जियों की

मात्रा बहुत कम देखी गई है। दूध, अण्डे, मांस और मछली तो नाम मात्र होते हैं क्योंकि अधिकांश जन समूह इन्हें खरीद नहीं पाते। आबादी के एक वृहत भाग को तो पर्याप्त आहार ही नहीं मिलता। फलस्वरूप कई पोषण सम्बन्धी समस्याएं उत्पन्न होती हैं। आइए, इन समस्याओं के बारे में जानें।

2.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के उपरांत शिक्षार्थी;

- भारतीय आहारों में विभिन्नता के बारे में जानना
- कुपोषण के प्रकार समझना
- अल्पपोषण जनित समस्यायों जैसे प्रोटीन ऊर्जा कुपोषण, रक्ताल्पता अथवा एनिमिया, विटामिन ए की कमी, आयोडीन अभाव जनित बीमारियाँ, बाहुल्य पोषण तथा मोटापा आदि के प्रकार, प्रसार, कारण तथा उपायों की जानकारी लेना।

2.3 भारतीय आहारों में विभिन्नता

भारत में आहारों के उपयोग में बहुत भिन्नता देखी जा सकती है। गुजरात, पंजाब, राजस्थान, मध्यप्रदेश और उत्तरप्रदेश में दूध और दालों का अधिक उपयोग किया जाता है जबकि आन्ध्रप्रदेश, बिहार, महाराष्ट्र, कर्नाटक और पश्चिम बंगाल में साधारण मात्रा में और जम्मू-कश्मीर, केरल और तमिलनाडु में बहुत कम मात्रा में किया जाता है। आहार में अनाजों की और ज्वार-बाजरा की मात्रा सबसे अधिक होती है। हरी सब्जियाँ, वसा और तेल का उपयोग कम किया जाता है। केरल, पश्चिम बंगाल और महाराष्ट्र में मछली का सबसे अधिक उपयोग किया जाता है।

2.4 संतुलित आहार के मुख्य अवयव

2.4.1 अनाज

संतुलित आहार के लिए अनाज की प्रतिदिन एक व्यक्ति को आवश्यकता 370gm है। वसा, तेल, मांस, मछली और दूध की कमी के कारण पर्याप्त मात्रा में कैलोरी या ऊर्जा नहीं मिल पाती है। अनुमानित कमी की पूर्ति के लिए 130gm अनाज और लेना चाहिए। वसा, तेल, दूध, मांस आदि की तुलना में अनाज सस्ते होते हैं। इनसे प्रोटीन, खनिज और B -विटामिन भी प्राप्त होते हैं।

2.4.2 दालें

भारत में प्रतिदिन प्रतिव्यक्ति दालों की उपलब्धि 51gm है जबकि आवश्यकता 60 gm है। इन आहार में फल और सब्जियों की मात्रा बहुत कम होती है। दूध, मांस, मछली और अण्डों की मात्रा

तो नाममात्र ही होती है। काफी बड़ी जनसंख्या को तो पर्याप्त भोजन भी प्राप्त नहीं होता। उपरोक्त परिस्थितयों के मुख्य कारण हैं-

i. जनसंख्या में अत्यधिक वृद्धि
ii. बहुत कम क्रय शक्ति
iii. असाक्षरता, अज्ञान, अन्धविश्वास और भोजन सम्बन्धी मिथक
iv. प्रतिव्यक्ति खेती योग्य भूमि की कमी और जमीन तथा पशुओं की उत्पादकता में कमी
v. औद्योगीकरण का निचला स्तर
vi. अस्वास्थ्यकर वातावरण जिसके कारण बार-बार संक्रामक रोग घेर लेते हैं तथा कुपोषण की समस्या को और अधिक जटिल बना देते हैं।
vii. खाद्यों के भण्डारण, परिवहन एवं वितरण में कमियाँ।

2.4.3 गिरी और तिलहन

फिलहाल गिरी और तिलहन का उपयोग तेल-उत्पादन के लिये किया जाता है। वर्तमान में मूंगफली के दानों का प्रति व्यक्ति प्रतिदिन उत्पादन 16 gm है। इसे बढ़ाकर 22.5 gm किया जाना चाहिए। मूँगफली के दानों की खली में प्रोटीन बहुत मात्रा में होती है इसलिए इसका उपयोग बच्चों के लिए परिष्कृत पूरक पौष्टिक आहार बनाने में किया जाता है। गिरी और तेलबीजों का उपयोग वैकल्पिक दूध बनाने में भी किया जा सकता है। जैसे सोयाबीन से बना दूध या मूंगफली से बना दूध।

2.4.4 दूध

दूध की प्रतिदिन प्रति व्यक्ति औसतन उपलब्धि 108 g है जबकि आवश्यकता 180g है। देश में दूध की कमी है। दूध की कमी की पूर्ति गिरी और तिलहन पर आधारित वैकल्पिक दूध बनाकर की जा सकती है।

2.4.5 मांस, मछली और अण्डे

मांस, मछली और अण्डों की प्रतिदिन प्रति व्यक्ति उपलब्धि केवल 12gm है जबकि संतुलित आहार के लिए आवश्यकता 35gm की है। इस कमी को निकट भविष्य में पूर्ति की कोई सम्भावना दिखाई नहीं देती है। प्रतिदिन प्रति व्यक्ति उपलब्धि बढ़ाने का तरीका यही हो सकता है कि प्रोटीन के सस्ते स्रोत के रूप में फलियों और तिलहनों का पूरक आहार के रूप में अधिकाधिक उपयोग किया जाये।

2.4.6 तेल और वसा

तेल और वसा की औसत उपलब्धि 10 gm है जबकि संतुलित आहार के लिए आवश्यकता 35gm की है। चूंकि अनाज तेल की तुलना में ऊर्जा के सस्ते स्रोत हैं और इनसे प्रोटीन, खनिज और विटामिन भी प्राप्त होते हैं इसलिए यह अधिक उपयुक्त होगा कि अनाज का उत्पादन बढ़ाया जाये और ऊर्जा की कमी की पूर्ति की जाये। साथ ही यह भी उचित होगा कि गिरी और तिलहनों के उत्पादन में वृद्धि की जाये। इनका उपयोग पूर्व शालेय और शालेय बालकों के लिए पूरक आहार के रूप में किया जा सकता है।

अधिकांश भारतीयों के भोजन में चाहे वह गरीब हो या अमीर, वृद्ध हो या युवा, स्त्री हो या पुरूष, गर्भवती स्त्री हो या धात्री माता, किसी-न-किसी पौष्टिक तत्वों की अधिकता या कमी रहती ही है। विशेषकर गरीब किसान, मजदूर तथा निम्न आर्थिक वर्ग के लोगों का भोजन गुणात्मक तथा परिणात्मक दोनों ही दृष्टि से अपर्याप्त होता है। भारत की अधिकांश गरीब जनता को प्रतिदिन सुबह-शाम भरपेट भोजन उपलब्ध नहीं हो पाता है। अतः वे प्रोटीन-कैलोरी कुपोषण से भयंकर रूप से पीड़ित होते हैं। गरीब परिवार के बच्चों को भरपेट अनाज भी नहीं मिलता है, परिणामतः उनके शरीर में ऊर्जा उत्पादक भोज्य तत्वों की भी कमी होती है तथा वे निर्बल, कमजोर, निशक्त एवं थके-थके दिखाई देते हैं। गर्भवती स्त्रियों तथा धात्री माताओं की दशा भी कम दयनीय नहीं है।

2.5 कुपोषण : परिभाषा

''यह पोषण की वह स्थिति है जिसके कारण व्यक्ति के स्वास्थ्य में गिरावट आने लगती है। यह एक या एक से अधिक तत्वों की कमी या अधिकता या असंतुलन के कारण होती है, जिसके कारण शरीर रोगग्रस्त हो जाता है।'' इसके निम्नलिखित प्रकार हैं-

अल्प पोषण- जब व्यक्ति के भोजन में किसी-न-किसी पोषक तत्वों की निरन्तर कमी बनी रहती है तो वह पोषण स्थिति ''अल्प पोषण'' कहलाती है। इसके कारण कई बीमारियाँ होती हैं जैसे- मरास्मस, क्वाशियोरकर, अन्धापन, स्कर्वी, रिकेट्स, बेरी-बेरी, रक्ताल्पता आदि। विकासशील तथा अविकसित देशों के अधिकांश लोगों में अल्प पोषण के कारण कई बीमारियाँ हो जाती हैं।

भारत में 70-80 प्रतिशत 1-5 वर्ष तक के बच्चों तथा गर्भवती माताएं रक्त रक्ताल्पता रोग से ग्रस्त होती हैं।

2.6 अल्प पोषण

अल्प पोषण दो तरह का होता है-

1. **प्राथमिक अल्प पोषण-** यह भोजन में पोषक तत्वों की निरन्तर कमी के कारण होता है।

2. **द्वितीयक अल्प पोषण-** जब व्यक्ति द्वारा समुचित मात्रा में सभी पोषक तत्वों से परिपूरित आहार ग्रहण किया जाता है, परन्तु शरीर में उनका पाचन, अवशोषण, चयापचय एवं संग्रहण सही प्रकार से नहीं हो पाता है तथा वे पोषक तत्व मल, मूत्र, पसीने तथा शरीर से बाहर उत्सर्जित हो जाते हैं। इस कारण ''द्वितीयक अल्प पोषण'' की स्थिति उत्पन्न हो जाती है। उदाहरणार्थ- फोलिक अम्ल का ठीक प्रकार से अवषोषण न होने से रक्ताल्पता रोग हो जाना, शरीर में कैल्शियम एवं फॉसफोरस के उचित प्रकार से अवषोषण नहीं होने के कारण रिकेट्स तथा ऑस्टोमलेशिया आदि रोग का होना।

अतः भारतवर्ष के अधिकाधिक जन समूहों में पोषण से सम्बन्धित समस्याएँ पोषण के अभाव परिणामस्वरूप उत्पन्न होती हैं। इनमें से मुख्य- प्रोटीन ऊर्जा कुपोषण, रक्ताल्पता अथवा एनिमिया, विटामिन-ए की कमी तथा 'आयोडीन अभाव जनित रोग' है। साथ ही साथ, सम्पन्न, धनीवर्ग में बाहुल्य पोषण के फलस्वरूप मोटापा; मधुमेह, हृदय रोग तथा कुछ प्रकार के कैंसर आदि हो जाते हैं।

अल्प पोषण के कारण होने वाली पोषण समस्याएँ निम्नलिखित हैं-

2.6.1 प्रोटीन ऊर्जा कुपोषण

भारतीय बच्चों के आहार-सम्बन्धी विकारों में प्रोटीन और कैलोरी की अपूर्णता से उत्पन्न होने वाले विकार सर्वाधिक महत्वपूर्ण हैं। प्रोटीन-कैलोरी कुपोषण ही गरीब बच्चों की अधिक मृत्यु-दर तथा अस्वस्थता दर के लिए मुख्यतः जिम्मेदार है। अभी हाल में हुए अनुसंधानों से ऐसे प्रमाण भी मिले हैं जो यह बताते हैं कि भ्रूणावस्था तथा शैशव काल की शुरु की जिन्दगी का कुपोषण बच्चे के आगे आने वाले विकास पर भी चिरस्थायी प्रभाव डाल सकता है। बचपन में प्रोटीन-कुपोषण से ग्रस्त होने के उपरान्त बालक की न केवल शारीरिक उन्नति पर वरन् मानसिक संसाधनों और सीखने की क्षमता पर भी विपरीत प्रभाव पड़ता है।

प्रोटीन-कैलोरी कुपोषण की समस्या एक से पाँच वर्ष तक के आयुकाल में खास तौर से तीव्र होती है। प्रारम्भिक शैशवाकाल में माता का दूध बच्चे की प्रोटीन आवश्यकताओं को पर्याप्त मात्रा में पूरा कर देता है। निर्धन भारतीय समुदायों की पोषण अवस्था की एक सबसे बड़ी संतोषप्रद विशेषता यह है कि अपने असंतोषजनक पोषण स्तर के बावजूद माताएँ जो दूध प्रदान करती हैं वह छः माह तक के शिशु के लिए अपने में समुचित एवं सम्पूर्ण आहार होता है। इतनी यथेष्ट मात्रा में दूध पिलाने के बावजूद छठे महीने के बाद केवल माँ के दूध पर ही बच्चे का विकास यथावत् बनाए रखना असम्भव हो जाता है। अतः पूरक खाद्य पदार्थों की आवश्यकता पड़ने लगती है। बच्चों में प्रोटीन कैलोरी कुपोषण दो रूपों में दिखाई देता है। एक रूप क्वाशियोरकर है। इसके लक्षण तथा पहचान वृद्धि का रुक जाना, दस्त लगना, बालों की विवर्णता तथा बिखरापन, त्वचा-विवर्णता और उसका उतरना, रक्ताल्पता, शरीर की सूजन (शोथ या oedema) विशेष रूप से टांगों और हाथों के हिस्से में,

और भावहीनता है। यद्यपि इन सब लक्षणों का प्रत्येक रोगी में पाया जाना जरूरी नहीं है। दूसरा रूप मरास्मस (सूखा रोग) है। इस रोग में शरीर की मांस पेशियों का क्षय होने लगता है। बच्चा दुबला पतला दिखाई देता है।

कभी-कभी सुझाव दिया जाता है कि शिशुओं और छोटे बच्चों में जो कुपोषण दिखाई पड़ता है वह आहार में प्रोटीन-हीनता के कारण होता है और उसका समाधान बच्चों के भोजन में प्रोटीन की मात्रा बढ़ा देना है। इस संदर्भ में बल देकर कहना पड़ता है कि छः महीने की आयु के पश्चात् यह जरूरी नहीं कि कुपोषण प्रोटीन-हीनता से ही हो, वरन् बच्चे द्वारा उपयुक्त समग्र भोजन की मात्रा विशेषकर कैलोरी में कमी के कारण भी हो सकता है। परिणामस्वरूप आहार यदि समुचति ऊर्जा युक्त न हो तो प्रोटीन का ऊर्जा पूर्ति में व्यय होने के कारण प्रोटीन अभाव के लक्षण भी उत्पन्न हो जाते हैं। इन अवस्थाओं में यदि प्रोटीन की अपूर्णता पूरी की जाती है और कैलोरी की अपूर्णता को छोड़ दिया जाता है तो अन्तर्गृहीत प्रोटीन बहुत सीमा तक केवल ऊर्जा का साधन बन जाती है और यह वृद्धि तथा ऊतकों के निर्माण में प्रयुक्त नहीं हो पाती। देश के विभिन्न स्थानों पर हाल के वर्षों में पाठशाला न जाने वाले (1-5 वर्ष के) बच्चों के आहारों पर किए गये कुछ सर्वेक्षणों से ज्ञात होता है कि हीन-आर्थिक दशा वाले वर्ग में अधिक बच्चों के आहार कैलोरी-हीन थे, जबकि प्रोटीन-हीनता केवल 30 प्रतिशत बच्चों के आहारों में पाई गई। इन तीस प्रतिशत बच्चों में भी प्रोटीन की कमी की भरपाई कुछ सीमा तक हो जाती यदि उनको आहार काफी मात्रा में दिया जाता। इसलिए हमें अपने बच्चों में व्याप्त कुपोषण के निदान के लिए उनके ऊर्जा-मान को पूरा करने में यथेष्ट भोजन को प्राथमिकता देनी चाहिए। उसके बाद ही प्रोटीन तथा अन्य प्रोटीन संसाधित खाद्यों की कमी को पूरा करना चाहिए।

प्रोटीन ऊर्जा कुपोषण की रोकथाम

शिशु एवं बच्चों में प्रोटीन ऊर्जा कुपोषण की रोकथाम हेतु सबसे महत्वपूर्ण बिन्दु है कि गर्भवती स्त्रियों एवं धात्री माताओं का पोषण स्तर सामान्य रखने के हर सम्भव प्रयास किये जायें। यह इसलिए नितान्त आवश्यक है क्योंकि गर्भकाल एवं शैशवावस्था में शिशु का पोषण एवं स्वास्थ्य स्तर क्रमश: गर्भवती स्त्री एवं धात्री माता के पोषण स्तर पर निर्भर करता है। इसके अतिरिक्त शिशु को 6 माह तक सम्पूर्ण स्तनपान पोषण एवं तदोपरान्त पूरक आहार दिये जाने की भी नितान्त आवश्यकता है। साथ ही साथ, जन सामान्य को, विशेषरूप से 15-45 वर्ष की स्त्रियों को जीवन की विभिन्न अवस्थाओं में संतुलित आहार एवं पोषण की शिक्षा एवं अभिज्ञा प्रदान की जाये तथा पोषण, स्वास्थ्य व रोग के पारस्थितिकीय सम्बन्ध समझाए जाए। अन्य महत्वपूर्ण बिन्दु- सामान्य स्वच्छता, स्वच्छ पेयजल की आवश्यकता एवं खाद्य सुरक्षा एवं संतुलित आहार के महत्व को उजागर करने से सम्बद्ध हैं। इसी प्रकार, सही समय पर बच्चों का टीकाकरण करवा कर उन्हें संक्रामक रोगों से बचाना भी महत्वपूर्ण है क्योंकि कुपोषण एवं रोग संक्रमण एक दूसरे को परस्पर बढ़ावा देकर विपरीत स्वास्थ्य स्थितियों को जन्म देते हैं।

2.6.2 रक्ताल्पता अथवा एनिमिया

रक्ताल्पता अथवा एनिमिया एक ऐसी स्थिति है जिसमें रक्त में हिमोग्लोबिन का स्तर सामान्य से कम हो जाता है। हम जानते हैं कि रक्त का लाल रंग हिमोग्लोबिन के कारण ही होता है तथा इसका कार्य शरीर में विभिन्न ऊतकों को ऑक्सीजन पहुँचाना होता है। हिमोग्लोबिन के बनने के लिए लौह तत्व आवश्यक होता है। यदि शरीर में लौह तत्व की कमी हो जाती है तो हिमोग्लोबिन का स्तर कम होने लगता है। हिमोग्लोबिन सामान्य स्तर से कम होने पर व्यक्ति एनिमिया की स्थिति में आ जाता है।

विभिन्न आयु वर्गों में सामान्य हिमोग्लोबिन का स्तर निम्न सारणी के अनुसार होता है-

आयु	**हिमोग्लोबिन (ग्राम/मि.ली)**
6 माह से 6 वर्ष तक	11 से अधिक
6 वर्ष से 14 वर्ष तक	12 से अधिक
वयस्क पुरुष	13 से अधिक
वयस्क महिला	12 से अधिक
गर्भवती महिला	11 से अधिक

स्रोतः UNICEF/UNU/WHO,2001 Report

रक्ताल्पता या एनिमिया क्यों होता है?

- भोजन में लौह लवण की कमी
- भोजन में लौह लवण की आहार तंत्र द्वारा अवशोषण में कमी
- अधिकाधिक रक्तक्षय जैसे- महिलाओं में मासिक रक्तस्राव, शल्य चिकित्सा
- पेट में कीड़े होने के कारण

लौह लवण अभाव एनिमिया के लक्षणः

- थकान
- सुस्ती
- जल्दी सांस फूलना
- नींद न आना
- सर दर्द
- भूख कम होना

- हृदय स्पंदन बढ़ना (पेलपीटेशन)
- जिह्वा, चेहरा, आँखों की श्लेष्मा एवं नाखूनों में सफेदी
- उंगलियों एवं एड़ियों में सूईयाँ-सी चुभना
- भंगुर नाखून, नाखून अवतल लैंस या चम्मच की तरह गहरे हो जाते हैं

लौह लवण अभाव रक्ताल्पता के परिणामः

छोटे बच्चों में:

- शारीरिक कार्यों में समन्वय की कमी
- भौतिक विकास में रुकावट
- मन्द भाषा विकास
- विद्यालयी कार्यप्रणाली में कमी
- अधिक थकान
- शारीरिक क्रियाशीलता में कमी
- अंततः मृत्यु

गर्भवती महिला:

- मातृत्व बीमारियों की अधिकता
- कम भार वाले बच्चों के पैदा होने की अधिक सम्भावना
- अंततः माता की मृत्यु

वयस्क पुरुषों में:

- शारीरिक क्रिया में कमी
- कमाने की शक्ति में कमी
- कार्यक्षमता में कमी
- अंततः मृत्यु

गर्भधारण करने वाली स्त्रियों में पाए जाने वाले पोषण विकारों में रक्ताल्पता

रक्ताल्पता सबसे अधिक महत्वपूर्ण विकार है। अधिकतम अवस्थाओं में इसका कारण लौह लवण की अपूर्णता होता है। गर्भावस्था स्त्रियों में रक्ताल्पता को बढ़ा देती है, तत्पश्चात रक्ताल्पता गर्भावस्था के पथ को प्रभावित करती है। यह देखा गया है कि रक्ताल्पता प्रत्यक्ष रूप से अथवा अप्रत्यक्ष रूप से, देश की प्रसूता-मृत्यु दर का एक मुख्य कारण है। रक्ताल्पता का निवारण खाद्य पदार्थों जैसे हरी

पत्ती वाली सब्जियों के दैनिक प्रयोग से किया जा सकता है। लौह लवणों की गोलियों का प्रयोग भी रक्ताल्पता की दशा को सुधारने की एक सरल, सस्ती और प्रभावी विधि है।

चूंकि गर्भवती स्त्रियों में विशेष रूप से रक्ताल्पता की संभावना अधिक होती है तथा रक्ताल्पता गर्भावस्था में मातृक स्वास्थ्य पर प्रतिकूल प्रभाव डालती है इसलिए इस बात का ध्यान रखना अत्यन्त आवश्यक है कि गर्भकाल में स्त्रियों को लौह लवण की पर्याप्त मात्रा मिल रही है अथवा नहीं। राष्ट्रीय पोषण संस्थान, हैदराबाद तथा अन्य स्थानों में किए गये अनुसंधानों से यह सिद्ध हो गया है कि यदि गर्भकाल के कम से कम अंतिम 100 दिनों में गर्भवती की सही देख-रेख रखी जाये तो गर्भकालीन रक्ताल्पता सफलतापूर्वक रोकी जा सकती है। रक्ताल्पता निरोधक कार्यवाही के रूप में विभिन्न योजनाओं के अंतर्गत सरकार द्वारा गर्भवती स्त्रियों को लौह लवण तथा फोलिक एसिड युक्त गोलियों का मुफ्त वितरण किया जाता है।

फोलिक एसिड या विटामिन-B_{12} या दोनों की हीनता के कारण एक और प्रकार की रक्ताल्पता Macrocytic anaemia जन्म लेती है। रक्ताल्पता का यह प्रकार सामान्य रूप में लौह लवण-हीनता जन्य रक्ताल्पता से कम प्रचलित है। हरे पत्तेदार सब्जियों और दालों का पर्याप्त मात्राओं में उपयोग फोलिक एसिड अपूर्णता सुधार देता है क्योंकि इन खाद्यों में फोलिक एसिड की प्रचुरता होती है। परन्तु विटामिन-B_{12} की अपूर्णता तो केवल पशुजन्य भोज्य पदार्थों यथा दूध, माँस, अण्डे इत्यादि से ही सुधारी जा सकती है। राष्ट्रीय पोषण संस्थान, हैदराबाद द्वारा किये गये अनुसंधानों से पता चलता है कि विटामिन- B_{12} हीनताजन्य रक्ताल्पता माँ का दूध पीने वाले बच्चों तक में पायी जाती है क्योंकि इन बच्चों की माताओं के दूध में विटामिन- B_{12} की न्यूनता होती है। माताओं के आहार में विटामिनों की मात्रा बढ़ा देने से उनके दूध में विटामिन की मात्र में सुधार किया जा सकता है।

राष्ट्रीय पोषण रक्ताल्पता रोगनिरोधी कार्यक्रम(National Nutritional Prophylaxis Programme, NNAPP)

उचित पोषण के अभाव में बालकों, शिशुओं, गर्भवती तथा धात्री माताओं में रक्ताल्पता रोग हो जाता है। यह रोग मुख्यतः शरीर में लौह लवण एवं फोलिक अम्ल की कमी के कारण होता है।

रक्ताल्पता सम्पूर्ण विश्व की एक प्रमुख कुपोषण समस्या है। भारत की 60-70 प्रतिशत तक गर्भवती महिलाएं इस रोग से पीड़ित होती हैं। आहार में पर्याप्त मात्रा में हरी पत्तेदार सब्जियाँ, मांस, मछली, यकृत, दाल के अभाव में यह रोग हो जाता है।

भारत सरकार के स्वास्थ्य एवं परिवार कल्याण मंत्रालय ने रक्ताल्पता की रोकथाम के लिए राष्ट्रीय स्तर पर इस कार्यक्रम की शुरूआत सन् 1970 में की थी। एक सर्वेक्षण के अनुसार प्रतिवर्ष 3 करोड़ बच्चे तथा 2.5 करोड़ वयस्क इस कार्यक्रम का लाभ उठा रहे हैं। रक्ताल्पता से बचाव हेतु गर्भवती माताओं तथा धात्री माताओं को लौह लवण एवं फोलिक अम्ल की गोली का मुफ्त वितरण किया

जाता है। गर्भावस्था के अन्तिम 2-3 माहों में लौह लवण की गोलियों का प्रतिदिन एक गोली सेवन आवश्यक है। यह गोलियाँ उन्हें अस्पतालों तथा स्वास्थ्य केन्द्रों पर मुफ्त मिलती है। इसके अतिरिक्त आजकल भोज्य पदार्थों का लौह तत्व के साथ प्रबलीकरण भी किया जाता है।

उद्देश्य

इस कार्यक्रम का मुख्य उद्देश्य शाला पूर्व बालकों, गर्भवती तथा धात्री माताओं में रक्ताल्पता रोग की दर एवं संख्या में कमी लाना है।

लाभ प्राप्त करने वाले समूह

(1) 1-5 वर्ष का बालक, (2) गर्भवती माता, (3) धात्री माता।

सेवाएं

i. गरीब वर्ग की गर्भवती तथा धात्री माता को निशुल्क लौह लवण की गोलियाँ वितरित करना।
ii. रक्ताल्पता से ग्रसित महिलाओं एवं बच्चों की पहचान कर उनका उपचार करना।
iii. लौह तत्व के उच्च स्रोतों को आहार में सम्मिलित करने के लिए प्रोत्साहित करना।
iv. आहार में हरी पत्तेदार सब्जियाँ जैसे- पालक, बथुआ, चौलाई, सहजन का पत्ता, चना का साग, सरसों का साग आदि भोज्य पदार्थों के सेवन हेतु प्रोत्साहित करना।

अभ्यास प्रश्न 1

1. रिक्त स्थान भरिए।
   a. संतुलित आहार के लिए अनाज की प्रतिदिन प्रति व्यक्ति आवश्यकता.....है।
   b. मूंगफली के दानों की खली में ..... बहुत मात्रा में होती है इसलिए उसका उपयोग बच्चों के लिए परिष्कृत पूरक आहार बनाने में किया जाता है।
   c. जब व्यक्ति के भोजन में किसी-न-किसी पोषक तत्वों की निरन्तर कमी बनी रहती है तो वह पोषण स्थिति..... कहलाती है।
   d. ..... एक ऐसी स्थिति है जिसमें रक्त में हीमोग्लोबिन का स्तर सामान्य से कम हो जाता है।
   e. ..... की हीनता के कारण Macrocytic Anaemia प्रकार की रक्ताल्पता जन्म लेती है।
   f. भारत सरकार के स्वास्थ्य एवं परिवार कल्याण मंत्रालय ने रक्ताल्पता की रोकथाम के लिए राष्ट्रीय स्तर पर रक्ताल्पता रोगनिरोधी कार्यक्रम की शुरूआत .....में की थी।

2.6.3 विटामिन-ए की कमी

विटामिन- A की कमी के कारण होने वाले कुपोषण बढ़ने वाले बच्चों को अशक्त बनाता है और स्थायी रूप से क्षति पहुँचाता है, फलस्वरूप मृत्यु दर में वृद्धि होती है। अनेक अशक्तजन्य प्रभावों में से, सबसे अधिक प्रभाव दृष्टि पर पड़ता है। भारत में विटामिन ए की कमी से होने वाली अंधता से कई लोग पीड़ित हैं। इनमें से अधिकांश अवस्थाओं में अन्धता निवारण उचित समय पर यथेष्ट पोषण सम्बन्धी देखभाल अर्थात आहार में विटामिन ए की कमी को पूर्ण कर किया जा सकता है।

विटामिन- ए की हीनता, आवश्यक रूप से एक बाल-समस्या है, क्योंकि तेजी से बढ़ते हुए बच्चों को इस विटामिन की आवश्यकता सबसे अधिक होती है। विटामिन- ए हीनता के मन्द-रूपों में, नेत्र-श्लेष्मला (नेत्र गोलक के श्वेत भाग के ऊपर का पारदर्शी आवरण) मलिन दिखाई देती है। गीली और चमकदार होने के स्थान पर वह सूखी और कांतिहीन हो जाती है। इस अवस्था में माता इस बात का पता लगा सकती है कि कम रोशनी में बच्चे को वस्तुओं के ठीक-ठीक देखने में कुछ कठिनाई महसूस होने लगती है। इस दशा को रतौंधी अथवा रात्रि अंधता कहते हैं और इसका निदान यदि शुरुआती अवस्था में हो जाये तो उपचार आसानी से किया जा सकता है। इससे अधिक उन्नत रूपों में स्वच्छ मंडल (आँख का पारदर्शी भाग) प्रभावित हो जाता है और अपनी पारदर्शिता खो देता है। अगली स्थिति में स्वच्छ मंडल अपारदर्शी हो जाता है और कोमल होकर बाहर उभर आता है। अंतिम अवस्थाओं में, स्वच्छ मंडल विदीर्ण होकर नष्ट हो जाता है तथा लेन्स भी नष्ट हो सकता है। एक बार स्वच्छ मंडल पर असर आ जाने के बाद कोई भी उपचार प्रभावशाली नहीं होता और चिरस्थायी अन्धता हटाई नहीं जा सकती। यह रोग प्रायः दोनों आँखों पर प्रभाव डालता है। गहन चिकित्सा द्वारा कम से कम एक आँख की दृष्टि को आंशिक रूप से पुनः स्थापित किया जा सकता है।

विटामिन- ए हीनता जन्य अन्धता की समस्या एक देशव्यापी समस्या है, परन्तु दक्षिणी भारत और बंगाल में यह विशेष रूप से देखी गई है। विटामिन-ए ऐसे खाद्य पदार्थों से जैसे मक्खन, अण्डे, यकृत इत्यादि में पाया जाता है, परन्तु ये महंगे होते हैं। बहुत सी हरे पत्तेदार सब्जियों और कुछ फलों में कैरोटीन होता है जो शरीर में जाकर विटामिन-ए में परिवर्तित हो जाता है। औसतन 50 ग्राम हरी सब्जी प्रतिदिन खाने से बच्चे की विटामिन-ए की माँग पूरी हो जाती है। इन्हीं मात्राओं में हरे पत्तेदार सब्जियों का नियमपूर्वक उपभोग इस विटामिन का शरीर में भण्डार बना देता है।

बच्चों में विटामिन-ए की अपूर्णता की समस्या का तर्कसंगत अभिगम तो यह है कि गर्भकाल में ही माता को कैरोटीन और विटामिन- ए की यथेष्ट मात्रा खिलाई जानी चाहिए। यदि गर्भवती स्त्री लगभग 100 ग्राम प्रतिदिन हरे पत्तेदार सब्जियों का मिश्रण खाए, तो जन्म से ही बच्चे के यकृत में विटामिन-ए का पर्याप्त भण्डार उपस्थित होगा। लगभग छठे महीने के बाद शिशु के आहार में उचित प्रकार

पकायी हुई हरी सब्जियों को सम्मिलित करना चाहिए। इस विधि से बच्चे को यथा अवसर पर विटामिन- ए समुचित मात्रा में प्राप्त हो सकेगा। प्रसूति तथा बाल-स्वास्थ्य केन्द्रों में माताओं को प्रभावी स्वास्थ्य शिक्षा देना और यह बताना भी आवश्यक है कि विटामिन- ए हीनताजन्य लक्षणों की प्रारम्भिक अवस्था क्या है, ताकि वे उन्हें पहचान सकें और उनका उपचार करवाएं।

राष्ट्रीय पोषण संस्थान, हैदराबाद द्वारा अभी हाल में किए गये अध्ययनों से ज्ञात होता है कि पाँच वर्ष के बच्चों को साल में दो बार विटामिन- ए की स्थूल मुखीय-मात्राएं (oral mega doses) देने से भी विटामिन- ए की हीनता से उत्पन्न अंधता का निवारण सार्थक रूप से हो जाता है। विटामिन- ए में यह क्षमता होती है कि वह यकृत में संग्रहित हो सकता है और यह देखा गया है कि विटामिन- ए की लगभग 200,000 अन्तर्राष्ट्रीय यूनिटों की केवल एक स्थूल मुखीय मात्रा (oral mega doses) सुरक्षित मात्रा होती है और लगभग छः महीने या उससे अधिक समय तक के लिए पर्याप्त भंडार बना सकती है। कुछ राज्य सरकारें भी अब ऐसी योजनाएं लागू कर रही हैं जिनमें बच्चों की विटामिन- ए की हीनता से उत्पन्न अंधता का नियंत्रण विटामिन- ए की स्थूल मात्राएं खिलाकर किया जाता है।

विटामिन- ए की अधिक खुराक विषाक्त लक्षण पैदा कर सकती हैं, अतः इस विटामिन की स्थूल मात्राएं छः माह में एक बार से अधिक नहीं देनी चाहिए।

2.6.4 आयोडीन अभाव जनित बीमारियाँ (Iodine Deficiency Disorder, IDD)

मनुष्य की अन्तःस्राव ग्रंथि 'थायरॉयड' गर्दन के क्षेत्र में स्थित होती हैं। यह ग्रन्थि 'थॉयरायड' हार्मोन नामक अन्तःस्राव की सृजक है। 'थायरॉयड' हार्मोन दो प्रकार के होते हैं-

i. 'थायरॉक्सीन'
ii. 'ट्राइआयडोथायरोनीन'

थायरॉयड ग्रन्थि द्वारा इन दोनों हार्मोनों के संश्लेष्ण हेतु खनिज लवण, 'आयोडीन' की आवश्यकता होती है। आयोडीन एक सूक्ष्म पोषक तत्व है जो साधारणतया मिट्टी में व्याप्त रहता है तथा सब्जियों जैसे कृषि उत्पादों में संयुक्त होकर उनके माध्यम से मनुष्य की दैनिक आवश्यकताओं की आपूर्ति करता है। सुप्रसिद्ध वैज्ञानिक रामालिंगास्वामी तथा गोपालन ने पिछली शताब्दी के उत्तरार्द्ध में देशव्यापी स्तर पर आयोडीन अभाव से संबंधित व्यापक सर्वेक्षण किए और पाया कि तटीय क्षेत्रों को छोड़कर अन्य स्थानों पर भूमि में वर्षा एवं बाढ़ जनित भूमि कटाव एवं वनस्पति हनन कारणों से आयोडीन का अभाव हो जाता है। इसी कारण से यह कृषि उत्पादों के माध्यम से मनुष्यों को प्राप्त न होकर आयोडीन अभाव जनित बीमारियों का कारण बनती है। शरीर में आयोडीन के अभाव के कारण थायरॉयड ग्रन्थि आकार में असामान्य रूप से विस्तृत हो जाती है जो गर्दन के क्षेत्र में एक विकृति के रूप में परिलक्षित होती है। इसे 'गोयटर', 'घैंघा रोग' अथवा 'गलगण्ड' कहते हैं। आयोडीन अभाव मनुष्य के स्वास्थ्य को जीवन की हर अवस्था में, भ्रूणावस्था से लेकर वयस्क-प्रौढ़

स्थिति तक अत्यन्त नकारात्मक तरीके से प्रभावित करता है। इस समय भारतवर्ष में 15 करोड़ लोग, आयोडीन अभाव जनित रोगों के खतरे में है।

निम्नलिखित विभिन्न कारण हैं जिनके फलस्वरूप आयोडीन शरीर को नहीं मिल पाती है-

i. आयोडीन के मुख्य स्रोतों- जल एवं खाद्य पदार्थों में कमी के कारण।
ii. बाल्यकाल, किशोरावस्था, गर्भावस्था एवं धात्री अवस्था में आयोडीन की अधिकाधिक आवश्यकता होती है जिसकी भरपाई आहार द्वारा हो पाना कठिन है।
iii. कुछ खाद्य पदार्थों जैसे पत्तागोभी, फूलगोभी, शलजम आदि में गोयटर जनक रासायनिक पदार्थों की उपस्थिति के कारण शरीर को उपलब्ध आयोडीन का उपयोग थायरॉयड हार्मोन संश्लेषण हेतु पूर्ण रूप से नहीं हो पाता है। इसीलिए इन खाद्य उत्पादों को 'घेंघा रोग कारक' अथवा 'गोयट्रोजन' कहते हैं।

इस समय भारत में लगभग 5 करोड़ के लगभग लोग घेंघा रोग से ग्रस्त हैं। इसी प्रकार भ्रूणावस्था में आयोडीन की कमी, गर्भस्थ शिशु के मस्तिष्क के सामान्य विकास में बाधा डालती है जो शिशु अवस्था में ही मृत्यु का कारण बन जाता है। अथवा जीवित रहने की स्थिति में आयुपर्यन्त शिशु 'क्रिटिनिजम' (cretinism) अथवा 'मंदबुद्धि' व्याधि से ग्रस्त रहता है। वृद्धि में रुकावट, मस्तिष्क मन्दता, बोलने और सुनने में रुकावट एवं पक्षाघात अथवा लकवा, क्रिटिनिजम के मुख्य लक्षण हैं। इस समय भारत में लगभग 20-22 लाख व्यक्ति क्रिटिनिजम से ग्रस्त हैं।

आयोडीन अभाव जनित रोगों की रोकथाम एवं नियंत्रण

भारत सरकार ने आयोडीन अभाव जनित रोगों की रोकथाम एवं नियंत्रण हेतु राष्ट्रीय स्तर पर 'नेशनल गोयटर (आयोडीन अभाव व्याधि) नियंत्रण कार्यक्रम' चलाया है। इस कार्यक्रम के अंतर्गत सामान्य निर्धन लोगों तक आयोडीन की समुचित मात्रा पहुँचाने हेतु निम्नलिखित तरीके अपनाए जाते हैं-

i. आयोडीन युक्त नमक का उपयोग- नमक में आयोडीन की एक निश्चित मात्रा संयुक्त कर लोगों तक पहुंचाई जाती है। चूंकि नमक का सेवन हर सामान्य व्यक्ति करता है अतः इसे एक वाहक के रूप में उपयोग किया जाता है।
ii. आयोडीन अभाव से ग्रस्त क्षेत्रों, विशेषकर पहाड़ी, हिमालय की तराई एवं मरूस्थलीय इलाके, जहां भूमि में आयोडीन की नितान्त कमी है तथा लोगों में आयोडीन की कमी गम्भीर रूप से व्याप्त है, लोगों को 1 मि.ली. आयोडीन युक्त तेल के 'इन्जेक्शन' दिये जाते हैं जो व्यक्ति को 5 वर्ष तक आयोडीन के अभाव से मुक्त रखते हैं। परन्तु साथ ही साथ यह भी सुनिश्चत करने की आवश्यकता है कि सामान्य से अधिक आयोडीन व्यक्ति के शरीर में न जाए क्योंकि आयोडीन की अधिकता के भी गम्भीर एवं दूरगामी दुष्परिणाम हैं।

नेशनल गोयटर नियंत्रण कार्यक्रम के उद्देश्य:

i. सर्वेक्षण द्वारा आयोडीन की कमी वाले क्षेत्रों का पता लगाना।
ii. हर पाँच वर्ष के बाद उन्हीं क्षेत्रों का फिर से सर्वेक्षण करना तथा रोगियों की संख्या पता लगाना।
iii. जन समुदाय में, विशेषकर आयोडीन की कमी वाले क्षेत्रों में आयोडीनयुक्त नमक उपलब्ध कराना तथा इसके सेवन हेतु प्रोत्साहित करना।

लाभार्थी

सभी आयु वर्ग के लोग।

कार्य/सेवाएं

1. नमक का आयोडीनीकरण- आयोडीन की कमी से उत्पन्न रोगों के निवारण हेतु भारत सरकार ने सादे नमक में आयोडीन मिलाने का कार्यक्रम शुरू किया है। नमक का उपयोग भोजन में हर वर्ग ले लोग प्रतिदिन ही करते हैं। 10 ग्राम आयोडीनयुक्त नमक लेने से 150 ग्राम आयोडीन की प्राप्ति हो जाती है जिससे एक वयस्क की दैनिक आवश्यकता की पूर्ति हो जाती है।

   प्रारम्भ में आयोडीन की पूर्ति हेतु पूरे देश में 12 आयोडीन संयंत्र लगाये गये थे। गुजरात, पश्चिम बंगाल, राजस्थान आदि राज्यों में भी आयोडीनयुक्त नमक बनाने के संयंत्र लगे हैं। सन् 1963 में मात्र 2 लाख टन आयोडीनयुक्त नमक का उत्पादन हो रहा था जो कि 1989 तक बढ़कर 22 लाख टन हो गया है।
2. आयोडीन रहित नमक का वितरण बंद करना- जन समुदाय में आयोडीन की कमी को रोकने हेतु आयोडीन रहित नमक का वितरण बंद करना अत्यावश्यक है। 1997 में भारत सरकार द्वारा आयोडीन रहित नमक के वितरण तथा भण्डारण पर प्रतिबंध लगाया गया। अब तक 18 राज्यों में आयोडीन रहित नमक का वितरण बिल्कुल बंद हो चुका है। शेष राज्यों में भी बंद होने की पूरी सम्भावना है। इसके लिए सरकार निरन्तर प्रयत्नशील है।

वर्तमान में इस योजना के स्वरूप में थोड़ा परिवर्तन करके सुधार किया गया है। नई घेंघा नियंत्रण योजना में घेंघा रोग से पीड़ित क्षेत्रों में गर्भवती स्त्री के रक्त की जाँच करके यह पता लगा लिया जाता है कि गर्भस्थ शिशु के शरीर में आयोडीन की कमी है अथवा नहीं। यदि है तो तुरन्त ही उसका उपचार प्रारम्भ कर दिया जाता है।

2.7 बाहुल्य पोषण

जब व्यक्ति के आहार में वसा अथवा कैलोरी की नियमित अधिकता हो जाती है तथा यह अधिकता लम्बे समय तक चलती रहती है तो वह अतिपोषण अथवा बाहुल्य पोषण कहलाता है। इसके कारण मोटापा हो जाता है जो आगे चल कर कई रोगों जैसे हृदय रोग, कुछ प्रकार के कैंसर आदि रोगों का कारण बनता है।

2.7.1 मोटापा

मोटापे का निर्धारण

मोटापे का निर्धारण इस प्रकार किया जा सकता है- (i) शरीर का वजन (ii) संपूर्ण शरीर की वसा का अनुमान और (iii) शरीर के त्वचीय मोड़ों (skin folds) का नाप। यदि किसी व्यक्ति के शरीर का वजन सामान्य से 20 प्रतिशत अधिक है तो उसे मोटा कहा जा सकता है। शरीर के वजन के अनुसार मोटापे को निम्नलिखत श्रेणियों में रखा जा सकता है-

शरीर का वजन सामान्य से अधिक (प्रतिशत में)	मोटापे की श्रेणी
20	सामान्य मोटापा (Marginal Obesity)
30	साधारण मोटापा (Moderate Obesity)
40	अधिक मोटापा (Severe Obesity)
50	बहुत अधिक मोटापा (Morbid Obesity)

मोटापे की जटिलताएं

मोटापे के कारण कई प्रकार की जटिलताएं उत्पन्न होती हैं जैसे (1) शारीरिक अयोग्यता (2) चयापचय सम्बन्धी गड़बड़ी (3) हृदय रोग (4) दुर्घटना ग्रस्त होने की अधिक आशंकाएं और (5) अल्पायु। मोटे लोगों को दुबले लोगों की तुलना में मधुमेह, एथीरोस्क्लीरोसिस (atherosclerosis) और हृदय-रोग अधिक होते हैं। ये प्रायः दुर्घटनाओं के भी शिकार हो जाते हैं। उपरोक्त खतरों के कारण कम आयु का भी भय रहता है।

रोकथाम

मोटापे की रोकथाम के उपाय है- (1) अधिक और बार-बार कैलोरी से भरपूर भोजन (तले हुए व्यंजन, गिरियाँ, मिठाई आदि) नहीं करना और (2) प्रतिदिन सामान्य से साधारण किस्म के व्यायाम

करना। बच्चों और माताओं को अधिक भोजन करने के दुष्परिणामों की जानकारी देनी चाहिए। इससे व्यापक रूप से फैल रही मोटापे की बीमारी (obesity) विशेषकर 'बाल्यावस्था में मोटापा' में कमी होगी।

उपचार

सामान्यतः मोटापा अधिक कैलोरी ग्रहण करने और शारीरिक परिश्रम कम करने से होता है। इसलिए इसके उपचार के सिद्धांत भी इन दो कारणों से निहित हैः

i. कैलोरी की मात्रा कम करना।
ii. शारीरिक श्रम अधिक करना।

भोजन में कमी: कैलोरी या भोजन कम करने का मुख्य उद्देश्य यह है कि इससे शरीर के वसा ऊतकों में संग्रहित चर्बी काम आयेगी और कैलोरी-आवश्यकता की पूर्ति करेगी। भोजन में कमी इस प्रकार की जानी चाहिए कि जो भोजन किया जाये उससे सामान्य दैनिक कैलोरी आवश्यकता से आधी मात्रा में कैलोरी प्राप्त हो।

व्यायाम: साधारण व्यायाम से अधिक शारीरिक शक्ति व्यय होती है। इससे शरीर के वजन में होने वाली वृद्धि कम होती है। सामान्य व्यक्ति सामान्य मात्रा में कैलोरी ले सकता है।

गत कई वर्षों में किए गये व्यापक आहार सर्वेक्षणों से पता चला है कि कम आमदनी वाले वर्गों के बहुत से लोगों के आहार प्रमाणीकृत मानकों के हिसाब से अपर्याप्त हैं। आहारों की अपूर्णता मात्रात्मक भी है और गुणात्मक भी। ज्यादा गरीब लोगों की तो मूलभूत कैलोरी आवश्यकताएं भी पूरी नहीं होती। प्रोटीन की खपत औसत दर्जे की और विटामिन तथा खनिजों का अंतर्गृहण तो यथेष्ट स्तरों से बहुत ही नीचा है। ऐसे असन्तोषप्रद आहारों के उपभोग के दुष्परिणाम देश के निम्न आय वर्गों तथा मध्य-आय-वर्गों में फैले हुए विस्तृत कुपोषण के रूप में दिखाई देते हैं। पोषण सर्वेक्षणों के परिणामों से पता चलता है कि आहार में पोषक तत्वों की स्पष्ट अपूर्णता के कारण कई रोग पैदा हो रहे हैं, विशेषरूप से जनता के संवेदनशील (vulnerable) वर्गों में जैसे गर्भवती स्त्रियों, शिशुओं, बच्चों और धात्री माताओं में। स्पष्ट लक्षणयुक्त रोगों के अलावा, जन-समुदायों में कुपोषण से उत्पन्न अन्य अनेक रोग उपस्थित होते हैं जो स्पष्ट लक्षणों को प्रदर्शित न कर सकें, परन्तु सही अर्थ में तो उत्तम स्वास्थ्य की दशा से हीन ही होते हैं तथा वे एक रोग से सम्बन्धित अन्य रोगों के आसानी से शिकार बन सकते हैं। कुपोषण के प्रत्यक्ष परिणामों से पैदा होने वाले रोगों के अतिरिक्त अब यह भी पता चला है कि कुपोषण अनेक संक्रामक बीमारियों की उपचार अवधि को बढ़ा देते हैं। अतः प्रत्यक्ष अथवा अप्रत्यक्ष रूप से कुपोषण हमारे जनसमूह की रुग्णावस्था का एक बहुत बड़ा कारण है। यह उचित है कि जो लोग बच्चों की संस्थागत देखभाल के जिम्मेदार हों और जो व्यवहारिक पोषण कार्य में लगे हुए हों, उन्हें स्वास्थ्य पर कुपोषण के दुष्परिणामों का ज्ञान होना चाहिए।

अतः भारतवर्ष के अधिकाधिक जन समूहों में पोषण से सम्बन्धित समस्याएँ अभाव पोषण के परिणामस्वरूप उत्पन्न होती हैं। इनमें से मुख्य प्रोटीन ऊर्जा कुपोषण, रक्ताल्पता अथवा एनिमिया, विटामिन-ए की कमी तथा आयोडीन अभाव जनित रोग हैं। साथ ही साथ सम्पन्न, धनीवर्ग में बाहुल्य पोषण के फलस्वरूप मोटापा, मधुमेह-टाइप-2, हृदय रोग तथा कुछ प्रकार के कैंसर आदि देखे जाते हैं।

अभ्यास प्रश्न 2

1. रिक्त स्थान भरिए।
   a. विटामिन- ए हीनता के मन्द-रूप में बच्चे को कम रोशनी में वस्तुओं को ठीक-ठीक देखने में कठिनाई महसूस होने लगती है। इस दशा को ..... कहते हैं।
   b. विटामिन- ए की लगभग …… की केवल एक स्थूल मुखीय मात्रा (oral mega doses) सुरक्षित मात्रा होती है।
   c. थायरॉयड ग्रन्थि द्वारा थायरॉक्सीन तथा ट्राइआयडोथायरोनीन हार्मोनों के संश्लेष्ण हेतु खनिज लवण…….. की आवश्यकता होती है।
   d. कुछ खाद्य पदार्थों जैसे पत्तागोभी, फूलगोभी, शलजम आदि में गोयटर जनक रासायनिक पदार्थों ..... की उपस्थिति के कारण शरीर को उपलब्ध आयोडीन का उपयोग थायरॉयड हार्मोन संश्लेषण हेतु पूर्ण रूप से नहीं हो पाता है।
   e. 10 ग्राम आयोडीनयुक्त नमक लेने से ……. आयोडीन की प्राप्ति हो जाती है जिससे एक वयस्क की दैनिक आवश्यकता की पूर्ति हो जाती है।
   f. सामान्य से 30 प्रतिशत अधिक शरीर का वजन..... मोटापे की श्रेणी के अंतर्गत आता है।

2.8 सारांश

भारत में आहारों के उपयोग में बहुत भिन्नता देखी जा सकती है। अधिकांश भारतीयों के भोजन में चाहे वह गरीब हो या अमीर, वृद्ध हो या युवा, स्त्री हो या पुरूष, गर्भवती स्त्री हो या धात्री माता, किसी-न-किसी पौष्टिक तत्वों की अधिकता या कमी रहती ही है। विशेषकर गरीब किसान, मजदूर तथा निम्न आर्थिक वर्ग के लोगों का भोजन गुणात्मक तथा परिणात्मक दोनों ही दृष्टि से अपर्याप्त होता है। कुपोषण पोषण की वह स्थिति है जिसके कारण व्यक्ति के स्वास्थ्य में गिरावट आने लगती है। यह एक या एक से अधिक तत्वों की कमी या अधिकता या असंतुलन के कारण होती है, जिसके कारण शरीर रोगग्रस्त हो जाता है। इसके दो प्रकार हैं, अल्प पोषण तथा बाहुल्य पोषण। भारतवर्ष के अधिकाधिक जन समूहों में पोषण से सम्बन्धित समस्याएँ अभाव पोषण के परिणामस्वरूप उत्पन्न

होती हैं। इनमें से मुख्य-प्रोटीन ऊर्जा कुपोषण, रक्ताल्पता अथवा एनिमिया, विटामिन-ए की कमी तथा आयोडीन अभाव जनित रोग है। साथ ही साथ सम्पन्न, धनीवर्ग में बाहुल्य पोषण के फलस्वरूप मोटापा, मधुमेह, हृदय रोग तथा कुछ प्रकार के कैंसर आदि का जनक बन जाता है। अतः संतुलित आहार अत्यधिक महत्वपूर्ण है।

2.9 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

अभ्यास प्रश्न 1

1. रिक्त स्थान भरिए।
   a. 370 gm
   b. प्रोटीन
   c. अल्प पोषण
   d. रक्ताल्पता अथवा एनीमिया
   e. फोलिक ऐसिड या विटामिन B_{12}
   f. सन्1970
2. रिक्त स्थान भरिए।
   a. रतौंधी
   b. 2,00,000 अन्तर्राष्ट्रीय यूनिटों
   c. आयोडीन
   d. घेंघा रोग कारक अथवा गोयट्रोजन
   e. 150 ग्राम
   f. मध्यम

2.10 निबंधात्मक प्रश्न

1. भारत में अल्प पोषण से होने वाली मुख्य समस्याओं के नाम लिखिए। यह समस्याएँ किन पोषण सम्बन्धी अनियमितताओं से होती हैं?
2. प्रोटीन ऊर्जा कुपोषण की रोकथाम कैसे की जा सकती है? क्रमबद्ध तरीके से समझाइये।
3. लौह तत्व अभाव जनित रक्ताल्पता क्यों होता है एवं इसके क्या-क्या लक्षण है?
4. भारत में विटामिन ए अभाव जनित व्याधियों के लक्षण एवं रोकथाम का संक्षिप्त ब्यौरा दीजिए।
5. आयोडीन की कमी के कारण होने वाली बीमारियों तथा इनकी रोकथाम के लिए किए जा रहे उपायों की जानकारी दीजिए।

इकाई 3: सार्वजनिक वितरण प्रणाली

3.1 प्रस्तावना
3.2 उद्देश्य
3.3 इतिहास, स्थापना एवं उद्देश्य
3.4 सार्वजनिक वितरण प्रणाली का क्रम विकास
3.5 लक्षित सार्वजनिक वितरण प्रणाली
3.6 सार्वजनिक वितरण प्रणाली और उससे जुड़े सर्वोच्च न्यायालय के निर्देश
    3.6.1 सर्वोच्च न्यायालय आदेश दिनांक 23 जुलाई, 2001
    3.6.2 सर्वोच्च न्यायालय आदेश दिनांक 28 नवम्बर, 2001
    3.6.3 सर्वोच्च न्यायालय आदेश दिनांक 2 मई, 2003
3.7 अनाज के वितरण हेतु सर्वोच्च न्यायालय के निर्देश
3.8 आन्ध्रप्रदेश का प्रयोग
3.9 सार्वजनिक वितरण प्रणालीः वर्तमान लेखा जोखा एवं सुधार की आवश्यकता
3.10 सारांश
3.11 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर
3.12 निबन्धात्मक प्रश्न

3.1 प्रस्तावना

हमारा देश 15 अगस्त, 1947 को अंग्रेजी शासन से स्वतंत्र हुआ। स्वतंत्रता के पश्चात देश के सामने गरीबी, खाद्य असुरक्षा, कम कृषि उत्पादकता आदि कई चुनौतियाँ थीं। खाद्य उत्पादन में वृद्धि के बिना खाद्य असुरक्षा तथा भूख की समस्या हल नहीं की जा सकती थी। ऐसी स्थिति में 1960 के दशक में भारत में हरित क्रांति की रूपरेखा बनाई गई। हरित क्रांति द्वारा कृषि उत्पादकता में वृद्धि तो देखी गई परन्तु खाद्य असुरक्षा तथा भूख की समस्या हल नहीं हो पाई। तत्पश्चात सरकार द्वारा अनाज की खरीद और वितरण की व्यवस्था को संतुलित बनाने के प्रयास किए गए। अतः खाद्यान्न भण्डारण एवं वितरण की नीति को क्रियान्वित करने के लिए एक व्यवस्था का जन्म हुआ जिसे हम सार्वजनिक वितरण प्रणाली कहते हैं। सार्वजनिक वितरण प्रणाली एक तरह की पूरक व्यवस्था है जिसके अंतर्गत मूलत: समाज के गरीब वर्ग को अत्यंत कम दामों पर खाद्यान्न एवं अन्य आवश्यक वस्तुएं वितरित किए जाने की व्यवस्था है। वर्ष 2000 के बाद इसमें गरीबी रेखा के नीचे जीवन यापन

करने वाले लोगों की आवश्यकता पूरी करने के लिए अन्य सार्थक योजनाएं भी चलाई गई। आइए, इस इकाई द्वारा हम सार्वजनिक वितरण प्रणाली के बारे में जानें।

3.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात आप:

- सार्वजनिक वितरण प्रणाली के उद्भव एवं विकास के उद्देश्य समझ पाएंगे;
- सार्वजनिक वितरण प्रणाली के प्रारम्भिक एवं विकसित स्वरूप की जानकारी ले पाएंगे;
- लक्षित सार्वजनिक वितरण प्रणाली से सम्बद्ध न्यायालय के आदेश की जानकारी प्राप्त कर पाएंगे; तथा
- सार्वजनिक वितरण प्रणाली के सुधार की आवश्यकता के बारे में जान सकेंगे।

3.3 इतिहास, स्थापना एवं उद्देश्य

1947 में स्वतंत्रता के साथ भारत को गरीबी और खाद्य असुरक्षा जैसी बड़ी चुनौतियाँ भी मिलीं तथा इन समस्याओं का हल करना विकास का प्रथम लक्ष्य बना। चूंकि उस समय न तो भारत की कृषि व्यवस्था स्वस्थ थी और न औद्योगिक कार्यप्रणाली, इसलिए एक अनिश्चित भविष्य की आशंका को निर्मूल साबित करने के लिए तथा खाद्य असुरक्षा के संकट से निबट कर गरीबी कम करने की चुनौती का सामना करने के लिए एक पूरे तंत्र, एक पूरी व्यवस्था की जरूरत महसूस की गई। सरकार ने इस बात पर बल दिया कि उत्पादन में जबरदस्त वृद्धि किए बिना भूख और गरीबी की समस्या का हल सम्भव नहीं है।

ऐसी स्थिति में 1960 के दशक में भारत में हरित क्रांति की रूपरेखा बनी। उद्देश्य यही था कि संसाधनों का अधिकतम उपयोग हो और तकनीक का उपयोग करके उत्पादन बढ़ाया जाये। हरित क्रांति से भारत की कृषि में बहुत से बदलाव आये और कुछ खास हिस्सों जैसे पंजाब-हरियाणा ने हरित क्रांति का भरपूर लाभ उठाया। वर्ष 1955-56 में खाद्यान्न उत्पादन 23 लाख टन था जो 1965-66 में बढ़कर 51 लाख टन हो गया। उत्पादन बढ़ने से खेतों से खूब सारा अनाज मण्डियों में पहुँचा परन्तु यह देखा गया कि इसकी खपत नहीं हो रही है। यह बड़ी ही विरोधाभासी स्थिति थी क्योंकि अनाज बहुतायत में होने के बावजूद भी जनता को उपलब्ध नहीं हो रहा था। उस स्थिति में खाद्य असुरक्षा के संकट के साथ गरीबी भी एक समस्या थी। सरकार को यह भी लग रहा था कि यदि किसानों को उनकी फसल का दाम नहीं मिला तो हरित क्रांति आगे नहीं बढ़ेगी। परन्तु सरकार के पास ऐसी कोई व्यवस्था नहीं थी कि वह बाजार की मंदी-तेजी को नियंत्रित कर सके और आपातकालीन स्थितियों में सामने आने वाली जरूरतों को पूरा कर सके। ऐसे में भारतीय खाद्य

निगम की स्थापना की भूमिका बनी। यह तथ्य उल्लेखनीय है कि हरित क्रांति से देश में उत्पादन बढ़ा है तथा देश के कुछ खास इलाकों में उत्पादन में उल्लेखनीय वृद्धि हुई है जैसे- पंजाब और हरियाणा। परन्तु देश के दूसरे हिस्सों जैसे- उड़ीसा, असम, आन्ध्रप्रदेश या तमिलनाडु में वैसा परिवर्तन नजर नहीं आया। यानी यह एक असंतुलित वृद्धि थी। इन बिन्दुओं के आधार पर ही एक खाद्य भण्डारण नीति बनी। सैद्धांतिक रूप से यह नीति निम्न बिन्दुओं पर आधारित थी-

1. अनाज के बाजार भावों के उतार-चढ़ाव पर नियंत्रण रखते हुए किसानों को उनकी लागत के अनुरूप न्यूनतम किन्तु बेहतर दाम उपलब्ध करवाना।
2. संकट के समय देश में खाद्य सुरक्षा की स्थिति सुनिश्चित करना।
3. जनकल्याणकारी योजनाओं के जरिये विभिन्न श्रेणियों की खाद्यान्न सम्बन्धी जरूरतों को पूरा करना।

प्रजातंत्रीय प्रणाली पर आधारित हमारी सरकार अनाज की खरीद और वितरण करके व्यवस्था को संतुलित बनाये रखने का प्रयास कर रही थी। जहाँ लोग गरीब, भोजन, पानी, स्वास्थ्य और शिक्षा जैसी मूलभूत सुविधाओं से वंचित होते थे, वहाँ तक अनाज पहुँचाने का काम करना सरकार का संवैधानिक दायित्व था। अतः खाद्यान्न भण्डारण एवं वितरण की नीति के उचित क्रियान्वन हेतु एक व्यवस्था का जन्म हुआ जिसे हम सार्वजनिक वितरण प्रणाली कहते हैं। परतंत्रता के दौर में पैदा हुए संकट से निपटने का यह एक रास्ता बन गया था।

सार्वजनिक वितरण प्रणाली के उद्भव एवं विकास के दो अन्य कारण यह भी थे कि-

1. हरित क्रांति की सफलता के फलस्वरूप अनाज की पैदावार में उत्तरोत्तर वृद्धि हुई परन्तु इस सुखद परिवर्तन से न तो किसानों को अपने खाद्य उत्पाद पर उचित मूल्य मिलना प्रारम्भ हुआ और न ही निर्धन उपभोक्ताओं की न्यून क्रय क्षमता होने के कारण समुचित खाद्यों तक पहुँच नहीं मिली।
2. इसमें अतिरिक्त वृद्ध, बीमार एवं अक्षम लोगों की सामाजिक सुरक्षा के अन्तर्गत पेट भर भोजन की आशा भी वास्तविक नहीं बन पाई।

शुरुआती रूप- सन् 1964 में जब सार्वजनिक वितरण प्रणाली की स्थापना अत्यन्त सदाशयता से हुई थी तब इसका लाभ समाज के हर वर्ग के व्यक्ति को मिलता था। पूरे देश में अनाज और अन्य सामग्रियों का वितरण करने के लिए सरकारी उचित मूल्य की दुकानों का जाल बिछाया गया। इन सरकारी दुकानों से गेहूँ, चावल, शक्कर, मिट्टी का तेल, सूती कपड़े, बच्चों की स्कूली सामग्री, तेल, साबुन जैसी सामग्री मिला करती थी। इस व्यवस्था का उद्देश्य लोगों की न्यूनतम जरूरतों को उचित मूल्य पर पूरा करना था। सरकार इस सम्बन्ध में रियायत देती रही है। रियायत के अर्थ यह है कि सरकार ज्यादा मूल्य पर बाजार से खरीद कर कम मूल्य पर यह सामान लोगों को उपलब्ध कराती रही है। इसके साथ ही दुकानें चलाने, अनाज-सामान का परिवहन करने और व्यवस्था का रखरखाव

का व्यय भी सरकार ही वहन करती रही है। एक तरह से सार्वजनिक वितरण प्रणाली केवल एक योजना नहीं है बल्कि यह एक संवैधानिक प्रतिबद्धता के रूप में विकसित हुई। दूसरे शब्दों में, 'सार्वजनिक वितरण प्रणाली' खाद्य अभाव का प्रबन्धन तथा खाद्यान्नों को वितरण सक्षम मूल्यों पर करने वाले तंत्र के रूप में विकसित हुई। इन सब वर्षों में यह देश की खाद्य अर्थव्यवस्था का प्रबन्धन करने के लिए सरकार की नीति का महत्वपूर्ण हिस्सा बन गई है। 'सार्वजनिक वितरण प्रणाली' एक तरह से पूरक व्यवस्था है। वर्तमान में समाज के सभी वर्गों को इसके अन्तर्गत वितरण किये जाने वाले खाद्यान्न एवं अन्य सामानों की आवश्यकताओं का पूर्णरूपेण आपूर्ति करने की व्यवस्था नहीं है। यह अलग बात है कि वर्ष 2000 के बाद इसने निर्धनता की रेखा के नीचे के लोगों की आवश्यकता पूरी करने के लिए अत्यन्त सार्थक योजनायें चलाई हैं।

सार्वजनिक वितरण प्रणाली केन्द्र तथा प्रादेशिक सरकारों के संयुक्त दायित्व में कार्य करती है। पिछले कई वर्षों तक सार्वजनिक वितरण प्रणाली पर सरकारी कुल खर्च का 2 प्रतिशत तक व्यय होता रहा है। सार्वजनिक वितरण प्रणाली पर सर्वाधिक व्यय वर्ष 1993-94 में हुआ था जब गरीबी हटाओ कार्यक्रमों पर कुल व्यय होने वाली राशि का लगभग 50 प्रतिशत, सार्वजनिक वितरण प्रणाली पर व्यय हुआ था। सार्वजनिक वितरण प्रणाली ने निर्धन घरों को खाद्य सुरक्षा उपलब्ध करवाने के काम को आगे बढ़ाया है। परन्तु इसमें व्याप्त भ्रष्टाचार, अक्षमता तथा लापरवाही से सरकार की छवि धूमिल हुई है तथा यह निर्धारित लक्ष्यों तक पहुँचने में सफल नहीं हुई है। सबसे अहम् बात तो यह है कि इतने महत्वाकांक्षी कार्यक्रम के परिणामस्वरूप निर्धन लोगों के पोषण स्तर में बहुत कम सुधार हुआ है। आज जब हम खाद्य सुरक्षा की बात करते हैं तो इसका उद्देश्य मात्र लोगों की जठराग्नि शांत करना अथवा भूख मिटाना ही नहीं अपितु समुचित पोषण प्रदान कर पोषण के अभाव से ग्रस्त लोगों का पोषण स्तर बढ़ाना है। स्वतन्त्रता के पश्चात भारत में भारतीय आयुर्विज्ञान अनुसंधान परिषद् (आई0 सी0 एम0 आर0) ने अभी तक तीन राष्ट्रीय परिवार स्वास्थ्य सर्वेक्षण (NFHS-I, NFHS-II, NFHS-III) करवाये हैं परन्तु तीनों सर्वेक्षणों के अनुसार भारतीय जनता के पोषण एवं स्वास्थ्य स्तर में उल्लेखनीय सुधार नहीं हुए हैं। आज जब हम राष्ट्रीय विकास की बात करते हैं तो उसमें आकलन के सूचक के रूप में आर्थिक प्रगति के वृद्धिसूचक मानक आंकड़ों के साथ लोगों के बेहतर पोषण स्तर के आंकड़े भी होने चाहिए।

3.4 सार्वजनिक वितरण प्रणाली का क्रम विकास

इस प्रणाली का उद्भव (वर्ष 1964 में) से लेकर 1992 तक यह योजना सभी उपभोक्ताओं के लिए थी। जून, 1992 में पुनर्शक्त सार्वजनिक आपूर्ति प्रणाली (रिवैम्पड पब्लिक डिस्ट्रिब्यूशन सिस्टम, आर.पी.डी.एस.) आरम्भ की गई। ऐसा करने के पीछे इस प्रणाली को सशक्त एवं कारगर बनाने का उद्देश्य था तथा इसकी पहुँच को देश के दूर दराज के इलाकों तक बढ़ाना था ताकि गरीब लोगों को

इस प्रणाली का लाभ मिल सके। इस प्रणाली के अन्तर्गत प्रत्येक राशन कार्ड धारी को 20 किलोग्राम खाद्यान्न मिलने का प्रावधान था। सार्वजनिक वितरण प्रणाली के इस अवतार की भी व्यापक आलोचना होने लगी। आलोचना के मुख्य बिन्दु निम्नलिखित थेः

1. यह प्रणाली 'गरीबी की रेखा से नीचे' की जनता के लिए प्रभावशाली सिद्ध नहीं हो रही थी।
2. यह प्रणाली शहरों एवं कस्बों में अधिक केन्द्रित होकर, ग्रामीण गरीबों को उपेक्षित कर रही थी।
3. भारत के जिन प्रदेशों में अधिक गरीबी है, वहाँ पर इसका प्रभाव तथा व्यापकता का स्तर एवं अनुपात कम था।
4. इसकी कार्यप्रणाली में पूर्ण पारदर्शिता एवं समन्वय नहीं था।

इन सब बातों को ध्यान में रखते हुए भारत सरकार ने इस प्रणाली को सार्थक रूप से कारगर बनाने का बीड़ा उठाया।

3.5 लक्षित सार्वजनिक वितरण प्रणाली (Targeted Public Distribution System)

सार्वजनिक वितरण प्रणाली समाज के निम्न वर्ग तक नहीं पहुंच पाने की सर्वत्र आलोचना होने के परिणामस्वरूप जून, 1997 में पिछली प्रणाली को परिष्कृत कर टी0 पी0 डी0 एस0 (Targeted Public Distribution System) लागू किया गया। इसके अनुसार प्रत्येक निर्धन परिवार को विशिष्ट सस्ती दर पर 10 किलो अनाज मिलने का प्रावधान था। एक अनुमानित गणना के आधार पर यह अपेक्षा की गई कि इस प्रक्रिया से लगभग 6 करोड़ निर्धन परिवारों को लाभ मिलेगा। लक्ष्य समूह परिभाषित करने के लिए 'राष्ट्रीय योजना आयोग' ने सुप्रसिद्ध शिक्षाविद् प्रोफेसर लाकड़ावाला की अध्यक्षता में एक समिति का गठन किया गया जिसकी अनुशंसाओं के आधार पर भारतीय संघ के प्रत्येक प्रदेश में निर्धन परिवारों को मानचित्रित किया गया। इस आयोग द्वारा सुझाए गए बिन्दुओं के अनुसार लक्षित समूह में 'वास्तविक निर्धन' जिनमें ग्रामीण क्षेत्रों के भूमिहीन, कृषि मजदूर, छोटे दस्तकार (कुम्हार, खाती, लुहार, बुनकर आदि) थे तथा नगरीय क्षेत्रों में झोपड़पट्टी में रहने वाले तथा दैनिक मजदूरी करने वाले कुली, रिक्शाचालक आदि थे। इन परिवारों को बी0 पी0 एल0 (Below Poverty Line) परिवार कहा जाने लगा तथा इन्हें वितरित करने वाले अनाज की मात्रा वर्ष 2000 में बढ़ाकर 20 किलो कर दी गई।

इस प्रकार सार्वजनिक वितरण प्रणाली द्वारा लाभान्वित होने वाले सभी भारतीय परिवारों को दो श्रेणियों में बांट दिया गया; ए0 पी0 एल0 (Above Poverty Line) तथा बी0 पी0 एल0 (Below Poverty Line)। बी0 पी0 एल0 परिवारों को दिये जाने वाले अनाज का मूल्य ए0 पी0 एल0 की तुलना में आधा था। इसी के साथ बी0 पी0 एल0 परिवारों में भी अत्यधिक गरीब परिवारों के चयन

की प्रक्रिया आरम्भ की गई तथा दिसम्बर, 2000 में एक और श्रेणी 'गरीबों में गरीबतम' बनाई गई। इस श्रेणी के लिए 'अन्त्योदय अन्न योजना' आरम्भ की गई। इन परिवारों को 25 किलोग्राम अनाज, गेहूँ एवं चावल क्रमश: रू02 एवं रू03 प्रति किलो की दर से दिया जाने लगा। 1 अप्रैल, 2002 से अन्त्योदय परिवारों को दिये जाने वाले अनाज की मात्रा बढ़ाकर 35 किलो प्रतिमाह कर दी गई। केन्द्र सरकार द्वारा खाद्य सहायता समूह (फूड सबसीडी) 1990-91 से 2002-03 तक निम्न सारणी अनुसार थी-

वर्ष	राशि (करोड़ रू. में)	कुल सरकारी खर्च का प्रतिशत
1990-91	2450	2.33
1991-92	2850	2.56
1992-93	2785	2.27
1993-94	5537	3.9
1994-95	4509	2.8
1995-96	4960	2.78
1996-97	5166	2.46
1997-98	7500	3.23
1998-99	8700	3.11
1999-2000	9200	3.03
2000-01	12125	3.61
2001-2002	17612	4.83
2002-2003	21200	5.17

स्रोत: http//:planningcommission.gov.in

इस योजना का पहला प्रसार जून, 2003 में किया गया, जिसमें इस योजना के अंतर्गत 5,000,000 अतिरिक्त बी0 पी0 एल0 परिवारों को सम्मिलित किया है। यह परिवार या तो गरीब विधवाओं के, गम्भीर रूप से बीमार व्यक्तियों के, विकलांग व्यक्तियों के तथा 60 वर्ष से अधिक आयु के उन व्यक्तियों के जिनकी आजीविका का कोई साधन नहीं था।

अन्त्योदय अन्न योजना का दूसरा प्रसार 2004-2005 में तथा तीसरा 2005-2006 में उन परिवारों के चयन के पश्चात किया गया जो भूख और उससे सम्बन्धित मौत के ग्रास बन सकते थे। इनमें चयन के लिए विशिष्ट सुझाव बिन्दु जारी किये गये थे। दोनों बार क्रमशः 50-50 लाख परिवारों को अन्त्योदय अन्न योजना में शामिल किया गया। अतः 2005-2006 में 'अन्त्योदय अन्न योजना' में परिवारों की संख्या 2.5 करोड़ हो गई जो कुल 'बी0 पी0 एल0' परिवारों का 38 प्रतिशत था।

30 अप्रैल, 2009 को 'अन्त्योदय अन्न योजना' में सम्मिलित परिवार प्रति प्रदेश, निम्न सूची के अनुसार थे-

क्र.सं	**प्रदेश/केन्द्र शासित प्रदेश**	**अनुमानित 'अन्त्योदय अन्न योजना' परिवार (संख्या लाख में)**	**'अन्त्योदय अन्न योजना' परिवार चिन्हित कर राशन कार्ड दिये गये (संख्या लाख में)**
1.	आन्ध्र प्रदेश	15.578	15.578
2.	अरूणाचल प्रदेश	0.380	0.380
3.	आसाम	7.040	7.040
4.	बिहार	25.010	24.285
5.	छत्तीसगढ़	7.189	7.189
6.	दिल्ली	1.568	1.502
7.	गोवा	0.184	0.145
8.	गुजरात	8.128	8.098
9.	हरियाणा	3.025	2.924
10.	हिमाचल प्रदेश	1.971	1.971
11.	जम्मू एवं कश्मीर	2.822	2.557
12.	झारखण्ड	9.179	9.179
13.	कर्नाटक	11.997	11.997
14.	केरल	5.958	5.958

15.	मध्य प्रदेश	15.816	15.816
16.	महाराष्ट्र	25.053	24.639
17.	मणिपुर	0.636	0.636
18.	मेघालय	0.702	0.702
19.	मिजोरम	0.261	0.261
20.	नागालैण्ड	0.475	0.475
21.	उड़ीसा	12.645	12.645
22.	पंजाब	1.794	1.794
23.	राजस्थान	9.321	9.321
24.	सिक्किम	0.165	0.165
25.	तमिलनाडु	18.646	18.646
26.	त्रिपुरा	1.131	1.131
27.	उत्तर प्रदेश	40.945	40.945
28.	उत्तराखण्ड	1.909	1.512
29.	पश्चिम बंगाल	19.857	14.799
30.	अण्डमान एवं निकोबार	0.107	0.043
31.	चण्डीगढ़	0.088	0.015
32.	दादरा एवं नगरहवेली	0.069	0.052
33.	दमन एवं दीव	0.015	0.015
34.	लक्षद्वीप	0.012	0.012
35.	पांडिचेरी	0.322	0.322
योग		**249.998**	**242.749**

स्रोत: http//:planningcommission.gov.in

सार्वजनिक वितरण प्रणाली में प्रतिकिलो अनाज का मूल्य निम्न सारणी के अनुसार है-

ए0 पी0 एल0		बी0 पी0 एल0 35 किलो		अन्त्योदय योजना 35 किलो	
गेहूँ	चावल	गेहूँ	चावल	गेहूँ	चावल
रू. 7.00	रू. 9.20	रू. 5.00	रू. 6.50	रू. 2.00	रू. 3.00

स्रोत: http//:planningcommission.gov.in

3.6 सार्वजनिक वितरण प्रणाली और उससे जुड़े सर्वोच्च न्यायालय के निर्देश

भारत के संविधान के अनुच्छेद 47 में यह कहा गया है कि राज्य का यह प्राथमिक कर्तव्य होगा कि वह लोगों के स्वास्थ्य, पोषण और जीवन स्तर को उठाने के लिए प्रयास करे। हमारा संविधान यह स्पष्ट करता है कि लोगों की खाद्य सुरक्षा सुनिश्चित करने, उनका पोषण स्तर उठाने के लिए सरकार हर जरूरी कदम उठायेगी। इसी के मद्देनजर भारत सरकार ने सार्वजनिक वितरण प्रणाली (राशन की उचित मूल्य की दुकानों की व्यवस्था) के जरिए यह सुनिश्चित करने का प्रयास किया कि लोगों को उनकी स्थिति और आय के अनुरूप न्यूनतम मूल्य पर खाद्यान्न की जरूरी मात्रा की उपलब्धतता सुनिश्चित हो सके। इसे गरीबी उन्मूलन की एक रणनीति के रूप में भी पहचाना गया। आरम्भ में यह तय किया गया था कि समाज के सभी वर्गों को राशन की दुकान से उचित मूल्य में राशन की उपलब्धता सुनिश्चित हो, परन्तु जून, 1997 में भारत सरकार ने इस व्यवस्था को लक्षित कर जन वितरण प्रणाली में बदल दिया। जिसके अन्तर्गत यह तय किया गया कि सरकारी रियायत (कम मूल्य का अनाज) का लाभ गरीबों और अति गरीब परिवारों को ही मिलेगा।

- सार्वजनिक वितरण प्रणाली गरीबी की रेखा के नीचे रहने वाले गरीब और अति गरीब परिवारों के लिए बहुत महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है।
- इस व्यवस्था के अन्तर्गत गरीब परिवारों को (जिनके नाम गरीबी की रेखा के नीचे रहने वाले परिवारों की सूची में दर्ज होते हैं) रियायती दर पर अनाज उपलब्ध कराया जाता है।
- गरीबी की रेखा के नीचे रहने वाले परिवारों में से लगभग एक चौथाई परिवारों को अति गरीब परिवार माना गया है, जिन्हें अन्त्योदय अन्न योजना का हितग्राही माना गया है। इन परिवारों को रू0 2 प्रति किलो की दर से गेहूँ और रू0 3 प्रति किलो की दर से चावल उपलब्ध कराया जाता है। अन्त्योदय अन्न योजना के अन्तर्गत एक राशनकार्ड पर 35 किलो अनाज दिये जाने का प्रावधान है।

- अपने 2 मई, 2003 के आदेश में सर्वोच्च न्यायालय ने निम्न समूहों से जुड़े व्यक्तियों/परिवारों को भी अन्त्योदय अन्न योजना का लाभ दिये जाने के निर्देश दिये हैं-

1. बूढ़े, लाचार, विकलांग, बेसहारा पुरुष एवं महिलायें, गर्भवती महिलायें व धात्री माताएं।
2. विधवा व वे एकल महिलायें जिनका कोई सहारा नहीं है।
3. 60 साल व उसके ऊपर के व्यक्ति जो बेसहारा हैं व जिनके पास आजीविका का कोई नियमित साधन नहीं है।
4. वे परिवार जिनमें कोई विकलांग व्यक्ति हैं।
5. ऐसा परिवार जहाँ वृद्धावस्था, शारीरिक व मानसिक बीमारी, रीति-रिवाजों, विकलांग व्यक्ति की देखभाल तथा अन्य किन्हीं वजहों से कोई ऐसा व्यक्ति नहीं है जो घर के बाहर कमाई के लिए जा सके।

3.6.1 सर्वोच्च न्यायालय आदेश दिनांक 23 जुलाई, 2001

हमारी राय में बुजुर्गों, अशक्तों, विकलांगों, भुखमरी के शिकार, दरिद्र महिलाओं और दरिद्र पुरुषों, गर्भवती और धात्री महिलाओं तथा दरिद्र बच्चों, खासकर उन मामलों में जिनमें वे स्वयं या उनके परिवार के सदस्य उन्हें पर्याप्त भोजन उपलब्ध कराने की आर्थिक स्थिति में न हों, को भोजन उपलब्ध कराना सबसे ज्यादा महत्वपूर्ण है। प्रचुर मात्रा में अनाज उपलब्ध होने पर भी गरीब लोगों तथा दरिद्रों को उपलब्ध नहीं हो पाता। इससे कुपोषण, भुखमरी और अन्य संबंधित समस्याएँ पैदा हो जाती हैं। सरकार, विभिन्न राज्यों तथा भारतीय खाद्य निगम को दो सप्ताह के अंदर जवाबी शपथ दाखिल कर देनी चाहिए क्योंकि अदालत की चिन्ता यह है कि गरीब लोग, दरिद्र जन तथा समाज के कमजोर वर्ग भूख और भुखमरी से पीड़ित न हों। इसे रोकना तथा बी0 पी0 एल0 कार्ड धारकों को अनाज की प्रभावी वितरण के संदर्भ में जो बातें कहीं गई हैं वे सभी उन पर लागू होंगी जो अन्त्योदय अन्न योजना में शामिल हैं। इसे सुनिश्चित करना सरकार का मुख्य दायित्व है, चाहे वह केन्द्र हो या राज्य।

3.6.2 सर्वोच्च न्यायालय आदेश दिनांक 28 नवम्बर, 2001

1. लक्षित सार्वजनिक वितरण प्रणाली (टी0 पी0 डी0 एस0)

I. भारतीय संघ का कहना है कि टी0 पी0 डी0 एस0 के संदर्भ में खाद्यान्न के आवंटन के मामले में पूर्ण अनुपालन हुआ है। यदि कोई राज्य पूर्ण अनुपालन न होने की किसी विशेष घटना को प्रकाश में लाता है तो इस कार्यक्रम के दायरे में सरकार आवश्यक कार्यवाही करेगी।

II. राज्यों को निर्देश दिया जाता है कि वे 1 जनवरी, 2002 तक गरीबी की रेखा से नीचे के परिवारों की पहचान पूरी कर लें, राशन कार्ड जारी कर दें और प्रति माह प्रति परिवार 25 किलो खाद्यान्न का वितरण आरम्भ कर दें।

III. सरकार यह सुनिश्चित करे कि टी0 पी0 डी0 एस0 के आवेदन फार्म आसानी से उपलब्ध हैं तथा उन्हें प्राप्त करने और जमा करने के लिए कोई शुल्क नहीं लगेगा। सरकार शिकायतों के त्वरित और प्रभावी निवारण के लिए प्रभावी व्यवस्था भी सुनिष्चित करेगी।

2. अन्त्योदय अन्न योजना

I. सरकार का कहना है कि 'अन्त्योदय अन्न योजना' के लिए खाद्यान्न के आवंटन के मामले में पूर्ण अनुपालन हुआ है। परन्तु यदि कोई राज्य पूर्ण अनुपालन न होने की स्थिति में कोई विशेष घटना प्रकाश में लाता है तो इस कार्यक्रम के दायरे में सरकार आवश्यक कार्यवाही करेगी।

II. राज्यों और संघ शासित प्रदेशों को निर्देश हैं कि वे 1 जनवरी, 2002 तक इस कार्यक्रम के अंतर्गत लाभार्थियों की पहचान, कार्ड जारी करने और अनाज के वितरण का काम पूरा कर दें।

III. यह प्रतीत होता है कि अन्त्योदय लाभार्थी अति निर्धनता के कारण अनाज उठाने में असमर्थ हो सकते हैं। ऐसे मामलों में केन्द्र, राज्यों और संघ शासित प्रदेशों से अनुरोध है कि वे अपनी पूर्ण संतुष्टि के बाद अनाज का कोटा निःशुल्क देने पर विचार करें।

IV. केन्द्र सरकार और प्रत्येक राज्य सरकार का कर्तव्य है कि वे भूख, कुपोषण से होने वाली मौतों की रोकथाम करें। अगर कमिश्नर ऐसी कोई रिपोर्ट देता है और न्यायालय को भी लगता है कि वास्तव में कोई भूख से मरा है तो माना जायेगा कि आदेशों का पालन नहीं हो रहा है तथा इसके लिए राज्यों के मुख्य सचिव तथा केन्द्र शासित प्रदेशों के प्रशासन को जिम्मेदार माना जाएगा।

3.6.3 सर्वोच्च न्यायालय आदेश दिनांक 2 मई, 2003

सर्वोच्च न्यायालय ने पिछले दो वर्षों में भी अपने विभिन्न आदेशों में इस मामले पर गहरी चिन्ता व्यक्त की है। एक आदेश में न्यायालय ने यह कहा है कि बूढ़े लाचार व्यक्तियों, विकलांगों, बेसहारा महिलाओं व बूढ़े पुरुषों जो कि भुखमरी के कगार पर हों, गर्भवती महिलाओं व बच्चों, धात्री माताओं तथा बेसहारा बच्चों को भोजन उपलब्धता सुनिश्चित कराना सरकार की जिम्मेदारी है। खासकर उन मामलों में जहाँ उनके पास या उनके परिवार के पास पर्याप्त भोजन उपलब्ध नहीं है। वास्तविक स्थिति में भोजन प्रचुर मात्रा में उपलब्ध है परन्तु उसका वितरण यथोचित नहीं है, जिसकी वजह से कुपोषण, गरीबी व इनसे जुड़ी दूसरी समस्याएँ पैदा हो रही हैं। न्यायालय की मुख्य चिन्ता यह है कि समाज का कमजोर वर्ग भूख या भुखमरी से त्रस्त न हो। लोगों को भूख से बचाना केन्द्र व राज्य सरकार दोनों की मुख्य जिम्मेदारी है। केवल योजनाएं बना देना ही काफी नहीं है, योजनाओं की उचित क्रियान्वयन भी आवश्यक है। सबसे महत्वपूर्ण यह है कि भोजन लोगों तक पहुँचे।

संविधान के 21वें अनुच्छेद में हर नागरिक को ''मानवीय गरिमा के साथ जीने का अधिकार'' दिया गया है। वह परिवार जो गरीबी रेखा के नीचे जी रहे हैं, सरकार की योजनाओं तथा उनके उचित

क्रियान्वयन के अभाव में अपने इस अधिकार से वंचित हैं। यह सरकार की जिम्मेदारी है कि इन्हें जरूरी मदद दी जाए। इसी संदर्भ में संविधान के अनुच्छेद 47 का उल्लेख किया जा सकता है जिसमें यह कहा गया है कि अपने नागरिकों के पोषण स्तर को ऊँचा उठाना, उनके जीवन स्तर को बढ़ाना और सार्वजनिक स्वास्थ्य व्यवस्था में सुधार सरकार की प्राथमिक जिम्मेदारी होगी।

3.7 अनाज के वितरण हेतु सर्वोच्च न्यायालय के निर्देश

अनाज के वितरण के लिए सर्वोच्च न्यायालय ने निम्न निर्देश दिए हैं-

1. राशन की दुकानों के वे संचालनकर्ताः
   - जो अपनी दुकानें पूरे माह निर्धारित समय तक न खोलते हों,
   - गरीबी की रेखा के नीचे आने वाले परिवारों का उनके लिए निर्धारित दरों पर अनाज उपलब्ध न करवाते हों,
   - बी0 पी0 एल0 परिवारों के कार्ड अपने पास रखते हों,
   - बी0 पी0 एल0 कार्ड में गलत सूचनाएं भरते हों,
   - राशन के अनाज को खुले बाजार में बेचते हों या उन व्यक्तियों को बेच देते हों जो बी0 पी0 एल0 सूची के बाहर हों और राशन की दुकानें दूसरे व्यक्तियों/संस्थाओं को चलाने लिए देते हों, उनका लाइसेंस तुरंत प्रभाव से रद्द कर दिया जाना चाहिए। सम्बन्धित अधिकारी को इस सम्बन्ध में कोई ढिलाई नहीं देनी चाहिए।
2. गरीबी की रेखा से नीचे वाले वाले परिवारों को अपने हिस्से का अनाज किश्तों में खरीदने की अनुमति होगी।
3. इस आदेश को बड़े स्तर पर प्रसारित किया जाए ताकि बी0 पी0 एल0 परिवार 'अनाज' के अपने अधिकार के बारे में जान सकें।

3.8 आन्ध्रप्रदेश का प्रयोग

आन्ध्रप्रदेश में सार्वजनिक वितरण प्रणाली द्वारा चावल एवं मिट्टी का तेल वितरित करने की 'भोजन कूपन प्रणाली' 1998-1999 से आरम्भ की गई है। इस योजना के अन्तर्गत, केवल राशन कार्ड के आधार पर सार्वजनिक वितरण प्रणाली के अंतर्गत चावल, गेहूं अथवा मिट्टी का तेल प्राप्त करने का अधिकार नहीं मिल सकता। इसके लिए पूर्व में कूपन जारी करवाए जाते हैं जिसके लिए अपना फोटो लगा राशन कार्ड लेकर परिवार के मुखिया को स्वयं उपस्थित होना पड़ता है तथा सार्वजनिक आपूर्ति विभाग में कर्मचारियों द्वारा कूपन के सत्यापन प्रक्रिया के उपरान्त ही राशन प्राप्ति होती है। इस प्रकार सरकार ने राशन डीलर द्वारा गरीब उपभोक्ताओं को कम राशन देकर शेष अनाज की

कालाबाजारी की प्रक्रिया को रोकने का प्रयास किया गया है। चूंकि निर्धन परिवारों के पास एक साथ बड़ी मात्रा में राशन क्रय करने का पूरा पैसा उपलब्ध नहीं रहता, अतः उन्हें कम मात्रा में (4 किलो, 6 किलो, 8 किलो) एक से अधिक कूपन लेने की सुविधा प्राप्त है ताकि इस माध्मय से वह समय-समय पर इच्छित मात्रा का कूपन देकर राशन ले सकें। इस प्रकार वर्ष 1998-1999 में आन्ध्रप्रदेश सरकार ने 20,000 टन चावल तथा 7,100 किलोलीटर मिट्टी का तेल कालाबाजारी के द्वारा बेचे जाने से रोका है तथा इस माध्यम से चावल पर 9 करोड़ रूपये बचाए हैं। अब कम्प्यूटर के उपयोग से इस योजना को और अधिक सरल और सुविधाजनक करने का प्रयास किया जा रहा है तथा इस प्रयोग को अन्य प्रदेशों में भी दोहराने का प्रयास किया जा रहा है।

3.9 सार्वजनिक वितरण प्रणालीः वर्तमान लेखा जोखा एवं सुधार की आवश्यकता

यद्यपि सार्वजनिक वितरण प्रणाली अपने उद्भव के उपरांत सतत् विकास यात्रा की ओर है और राजनीतिक एवं सार्वजनिक सक्रियता तथा न्यायालय के आदेशों के बावजूद भी इस प्रणाली पर दक्षता की कमी, अनियमितता, भ्रष्टाचार, कमतर गुणवत्ता में खाद्य वितरित करना एवं राजनीतिक कारणों से 'मिनिमम सपोर्ट प्राइस' (एम0 एस0 पी0) स्थिर कर अधिकाधिक मात्रा एवं कम गुणवत्ता के खाद्यान्न भारतीय खाद्य निगम तथा प्रादेशिक भण्डारण निगमों द्वारा क्रय करवाने के आक्षेप हैं। साथ-साथ ही भारतवर्ष में व्याप्त कुपोषण के आंकड़े तथा समय समय पर विभिन्न प्रदेशों से भूख के कारण हो रही मौतों की खबरें भी इस प्रणाली का उचित क्रियान्वयन न होने की स्थिति को दर्शाते हैं। भारत वर्ष को 'कुपोषित एवं अल्प उत्पादक नागरिकों' का देश न बनने देने के लिए हमें सार्वजनिक वितरण प्रणाली को हर स्तर पर सुदृढ़ करना पड़ेगा ताकि यह भारत में आम आदमी के समग्र पोषण, स्वास्थ्य एवं बहुर्मुखीय विकास के सूत्रधार का काम कर सके।

अभ्यास प्रश्न 1

1. सही या गलत बताइए।
   a. सन् 1964 में जब सार्वजनिक वितरण प्रणाली की स्थापना हुई थी तब इसका लाभ समाज के हर वर्ग के व्यक्ति को मिलता था।
   b. सार्वजनिक वितरण प्रणाली, केन्द्र तथा प्रादेशिक सरकारों के संयुक्त दायित्व में कार्य करती है।
   c. सार्वजनिक वितरण प्रणाली समाज के निम्न वर्ग तक नहीं पहुंच पाने के परिणामस्वरूप जुलाई, 1997 में पिछली प्रणाली को परिष्कृत कर टी0 पी0 डी0 एस0 (Targeted Public Distribution System) लागू किया गया।

d. अन्त्योदय अन्न योजना' के अंतर्गत एक राशनकार्ड पर परिवारों को 35 किलोग्राम अनाज प्रतिमाह दिए जाने का प्रावधान है।
e. मध्य प्रदेश में सार्वजनिक वितरण प्रणाली द्वारा चावल एवं मिट्टी का तेल वितरित करने की 'भोजन कूपन प्रणाली' 1998-1999 से आरम्भ की गई है।

3.10 सारांश

संपूर्ण जनता को समुचित भोजन उपलब्ध कराने हेतु तथा खाद्यान्न भण्डारण एवं वितरण की नीति को क्रियान्वित करने के लिए एक व्यवस्था का जन्म हुआ जिसे हम सार्वजनिक वितरण प्रणाली कहते हैं। हरित क्रांति की सफलता के फलस्वरूप अनाज की पैदावार में उतरोत्तर वृद्धि होने के कारण तथा वृद्ध, बीमार एवं अक्षम लोगों की सामाजिक सुरक्षा के अन्तर्गत समुचित भोजन की आशा भी सार्वजनिक वितरण प्रणाली के उद्भव एवं विकास के दो अन्य कारण थे। शुरुआत में सार्वजनिक वितरण प्रणाली का लाभ समाज के हर वर्ग के व्यक्ति को मिलता था। जून, 1997 में पहले की प्रणाली को परिष्कृत करके टी0 पी0 डी0 एस0 (Targeted Public Distribution System) लागू की गई। इसके अनुसार प्रत्येक निर्धन परिवार को विशिष्ट सस्ती दर पर 10 किलो अनाज मिलने का प्रावधान रखा गया। दिसम्बर, 2000 में एक और श्रेणी 'गरीबों में गरीबतम' बनाई गई तथा इनके लिए 'अन्त्योदय अन्न योजना' आरम्भ की गई। इन परिवारों को 35 किलोग्राम अनाज, गेहूँ एवं चावल क्रमश: रू02 एवं रू03 प्रति किलो की दर से दिया जाने लगा। भारत को 'कुपोषित एवं अल्प उत्पादक नागरिकों' का देश न बनने देने के लिए हमें सार्वजनिक वितरण प्रणाली को हर स्तर पर सुदृढ़ करना पड़ेगा ताकि यह भारत में आम आदमी के समग्र पोषण, स्वास्थ्य एवं बहुर्मुखीय विकास के सूत्रधार का काम कर सके।

3.11 अभ्यास प्रश्नों के उत्तर

अभ्यास प्रश्न 1

1. सही या गलत बताइए।
   a. सही
   b. सही
   c. गलत
   d. सही
   e. गलत

3.12 निबन्धात्मक प्रश्न

1. सार्वजनिक वितरण प्रणाली के उद्देश्यों की विवेचना कीजिए।
2. 'सार्वजनिक वितरण प्रणाली' अपने उद्देश्यों में आंशिक रूप से ही सफल हुई है। इस कथन पर समीक्षात्मक टिप्पणी लिखिए।
3. लक्षित सार्वजनिक वितरण प्रणाली के धनात्मक एवं ऋणात्मक पक्षों पर प्रकाश डालिए।
4. सार्वजनिक वितरण प्रणाली से जुड़े न्यायालय प्रदत्त दो महत्वपूर्ण आदेशों की सोद्देश्यता का वर्णन कीजिए।
5. सार्वजनिक वितरण प्रणाली में सुधार की आवश्यकता क्यों जरूरी है? टिप्पणी कीजिए।

इकाई 4: पोषण का प्रत्यक्ष मानवीय मूल्यांकन

4.1 प्रस्तावना
4.2 उद्देश्य
4.3 पोषण सर्वेक्षणों के उद्देश्य
4.4 पोषण स्तर ज्ञात करने की विधियाँ
    4.4.1 खाद्य सर्वेक्षण
    4.4.2 बायोफिजिकल एवं शरीर रचनात्मक मूल्यांकन
    4.4.3 बायोकेमिकल टेस्ट (जैवरासायनिक विधियाँ)
    4.4.4 क्लीनिकल लक्षण आधारित पोषण मूल्यांकन
4.5 सारांश
4.6 निबंधात्मक प्रश्न

4.1 प्रस्तावना

जन समुदाय की पोषण अवस्था आहार, संक्रमण और परजीवी बीमारियों द्वारा अत्यधिक रूप से प्रभावित होती है। कुपोषण अथवा अल्पपोषण से बच्चों का विकास और स्वास्थ्य तथा वयस्कों के स्वास्थ्य एवं शारीरिक क्षमता पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है। विकासशील देशों में गर्भवती स्त्रियों, स्तनपान छुड़ाये हुए बच्चों और पूर्व शालेय बालकों तथा कम आय समूह के व्यक्तियों में कुपोषण का प्रभाव अत्यधिक देखा गया है। भारत सहित अन्य विकासशील देशों में कुपोषण तथा अपर्याप्त पोषण का प्रतिशत विकसित देशों की अपेक्षा काफी अधिक है। भारत के अलग-अलग प्रदेशों में विभिन्न आयु के लोगों में व्याप्त पोषण के स्तर की पूर्ण एवं तथ्यपरक जानकारी उपलब्ध नहीं है। अतः कोई भी कार्यक्रम जो पोषण स्तर से संबंधित होता है केवल आरम्भिक रूप में ही सफल हो पाता है। कोई भी राष्ट्रीय कार्यक्रम यदि कुपोषण की स्थिति से निपटने के उद्देश्य से आयोजित किया जा रहा हो तो उसे स्थान विशेष की सामाजिक, आर्थिक स्थिति, खाद्य पदार्थों के प्राप्ति के साधन तथा वर्तमान पोषण स्तर को ध्यान में रखकर किए जाने पर ही अभीष्ट परिणाम प्राप्त होते हैं।

4.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन द्वारा शिक्षार्थी पोषण सर्वेक्षणों के उद्देश्यों तथा पोषण स्तर ज्ञात करने की विभिन्न विधियों के बारे में जान पाएंगे, जैसे:

- खाद्य सर्वेक्षण
- बायोकैमिकल टेस्ट (जैव रसायनिक परीक्षण)
- बायाफिजिकल टेस्ट एवं शरीर रचनात्मक (एंथ्रोपोमीट्रिक) मूल्यांकन।
- क्लीनिकल लक्षण

4.3 पोषण सर्वेक्षणों के उद्देश्य

पोषण सर्वेक्षणों के निम्न उद्देश्य हैं:

- सभी आयु-समूह वाले व्यक्तियों के वजन और ऊँचाई तथा बालकों के विकास की गति का निर्धारण करना।
- आहारीय कमियों के कारण होने वाली बीमारियों के नैदानिक चिन्ह एवं लक्षण से उनके व्याप्त होने के स्तर का निर्धारण करना।
- समुदाय में प्रचलित कुपोषण एवं अल्पपोषण को समाप्त करने के तरीके सुझाना।

4.4 पोषण स्तर ज्ञात करने की विधियाँ

पोषण स्तर ज्ञात करने के उद्देश्य के आधार पर एक अथवा एक से अधिक विधियों/पद्धतियों/प्रणालियों का उपयोग किया जाता है, जो इस प्रकार हैं:

- खाद्य सर्वेक्षण
- बायोफिजिकल एवं शरीर रचनात्मक मूल्यांकन
- नैदानिक लक्षण परीक्षण
- जीवरासायनिक/प्रयोगशाला परीक्षण

4.4.1 खाद्य सर्वेक्षण

पोषण स्तर को ज्ञात करने की विधियों का सर्वेक्षण अर्थात् व्यक्ति/परिवार/समूह विशेष द्वारा ग्रहण की गई खाद्य पदार्थों की मात्रा को ज्ञात किया जाता है क्योंकि खाद्य पदार्थों की ग्रहण की जाने वाली मात्रा पर सामाजिक, आर्थिक, क्षेत्रीय रीति-रिवाजों का प्रभाव पड़ता है।

खाद्य सर्वेक्षण के प्रमुख उद्देश्य

आहार सर्वेक्षण के प्रमुख उद्देश्य इस प्रकार हैं:

1. व्यक्ति/परिवार/समूह विशेष द्वारा उपयोग में लाये गये खाद्य पदार्थ के संबंध में विविध प्रकार की जानकारी प्राप्त करना तथा खाद्य पदार्थ/पोषक तत्वों की पर्याप्तता को जानना।
2. खाद्य सर्वेक्षण से प्राप्त खाद्य पदार्थ एवं पोषक तत्वों की पर्याप्तता संबंधी जानकारी के आधार पर उचित एवं योग्य आहार विशेष सुझाव अनुशंसित करना जिससे भविष्य में पोषक तत्वों की कमी न होने पाए।
3. खाद्य सर्वेक्षण द्वारा व्यक्ति तथा परिवार की सामाजिक, आर्थिक तथा स्थानीय वातावरण सम्बन्धी निम्न प्रकार की जानकारी प्राप्त होने पर आहार सम्बन्धी सुधार/सुझाव आयोजित करना सुलभ एवं संभव हो जाता है जैसेः
   - भोजन सम्बन्धी आदतें, घर में प्रयुक्त भोज्य प्रदार्थ तथा उनकी कीमत।
   - व्यक्ति/परिवार/समूह विशेष द्वारा उपयोग में लाई गई तथा थाली में छोड़ दी गई खाद्य पदार्थ की मात्रा।
   - प्रति व्यक्ति/परिवार द्वारा प्रतिदिन में लाई गई पोषक तत्वों की औसत मात्रा।
4. आहार आयोजन तथा प्रति व्यक्ति प्रतिदिन खाद्य पदार्थ की निर्धारित मात्रा से तुलना।
5. खाद्य पदार्थ प्राप्त करने, संग्रहित रखने तथा वितरण की विधियों की जानकारी।
6. अलग-अलग ऋतुओं में खाद्य पदार्थों की खरीदी गई औसत मात्रा की जानकारी।
7. स्थानीय व्यंजन, खाने तथा परोसने की विधियों की जानकारी।
8. खाद्य पदार्थ प्राप्त करने, संग्रहित रखने, बनाने तथा परोसने के संबंध में स्वच्छ, साफ तथा स्वस्थ पद्धतियाँ सुझाना।
9. पूर्व में किये गए खाद्य सर्वेक्षण के संबंध में तुलनात्मक जानकारी।
10. विशेष अवसरों तथा बीमारियों के समय आहार का आयोजन।
11. पोषक तत्वों की ग्रहण की गई मात्रा में कमी/बाहुल्य ज्ञात कर राष्ट्रीय योजनाओं में योगदान देना।
12. सामान्य एवं प्रतिकूल प्ररिस्थितियों में खाद्य पदार्थ के वितरण एवं परिवहन कार्यक्रमों में मदद करना। विशेष रूप से बाढ़, सूखा एवं अन्य प्राकृतिक आपदाओं में जब कृषि उत्पादन, वितरण तथा परिवहन बुरी तरह से प्रभावित रहता है।
13. खाद्य पदार्थों की प्रयुक्त/उपयोग में आने वाली मात्रा के ज्ञात होने से भोजन बनवाने हेतु न्यूनतम मजदूरी एवं बड़े समूह हेतु भोजन व्यवस्था कार्यक्रम आयोजित करने में मदद मिलती है।

खाद्य सर्वेक्षण के प्रकार

खाद्य सर्वेक्षण दो प्रकार के होते हैं-

(क) गुणात्मक सर्वेक्षण- इस प्रकार के सर्वेक्षण में खाद्य पदार्थ के नाम, व्यंजनों के नाम, अवसर जिसमें विशिष्ट व्यंजन बनाये जाते हों, से संबंधित जानकारी प्राप्त की जाती है। गुणात्मक सर्वेक्षण में विषेष रूप से खाने/भोजन में प्रयुक्त खाद्य पदार्थों के प्रकार, उनकी आवृत्ति, व्यक्तियों के भोज्य पदार्थ खाने संबंधी विचार एवं प्रवृत्ति के बारे में जानकारी प्राप्त हो जाती है। स्वस्थ एवं रोग की अवस्था में उपयोग में लाये जाने वाले व्यंजन तथा आहार की प्रथाएँ एकत्र की जाती हैं। गर्भावस्था, धात्रीवस्था, शैशवावस्था जैसी विशिष्ट स्थितियों में प्रचलित भोजन व्यवस्था के बारे में प्रथाएँ ज्ञात की जाती हैं।

(ख) मात्रात्मक सर्वेक्षण- इस प्रकार के सर्वेक्षण में खाद्य पदार्थ विशेष द्वारा खायी गई मात्रा से संबंधित जानकारी एकत्र की जाती है। मात्रात्मक सर्वेक्षण के प्रकार में उपयोग में लाये गये भोज्य पदार्थों की प्रतिदिन की मात्रा ग्राम या मिलीलीटर में ज्ञात करने का प्रयास किया जाता है। प्राप्त खाद्य पदार्थ की मात्राओं के आधार पर पोषक तत्वों की गणना की जाती है। पोषक तत्वों की मात्रा की प्रतिदिन की पोषक तत्वों की निर्धारित मात्रा (दैनिक आवश्यकता) से तुलना की जाती है। परिणामस्वरूप, सर्वेक्षण के आधार पर ग्रहण की गई पोषक तत्वों की/खाद्य पदार्थों की मात्रा निर्धारित मात्रा से कितनी अधिक या कम है, इसका प्रतिशत ज्ञात कर सुधार करने का प्रयास किया जाता है।

खाद्य सर्वेक्षण की प्रमुख विधियाँ

वर्तमान में आहार सर्वेक्षण की कई विधियाँ उपलब्ध हैं। आहार सर्वेक्षण के उद्देश्यों के अनुरूप उनमें से किसी एक का चयन किया जाता है। आहार सर्वेक्षण व्यक्ति/परिवार/समूह का किया जाता है। सर्वेक्षण के लिए उपलब्ध कर्मचारी, समय, उपकरण तथा परिवहन इत्यादि की सुविधानुसार तथा सांख्यिकीय नियमों को ध्यान में रखकर यह निर्णय लिया जाता है कि सर्वेक्षण कितने लोगों का (नमूना आकार अथवा सैम्पल साइज) करना है तथा कितनी अवधि में होना चाहिए। खाद्य सर्वेक्षण की निम्नांकित विधियों द्वारा इस प्रक्रिया को पूरा किया जाता हैः

(1) खाद्य संतुलन लेखा विधि

(2) खाद्य सूची विधि

(3) खाद्य पदार्थों के भार द्वारा

(4) खाद्य पदार्थों पर व्यय के स्वरूप द्वारा

(5) आहारीय इतिहास द्वारा

(6) मौखिक प्रश्नावली द्वारा

(7) प्रमुख खाद्य पदार्थ की सेम्पल विधि द्वारा

(1) खाद्य संतुलन लेखा विधि (फूड बैलेंस शीट विधि)

खाद्य संतुलन लेखा विधि में किसी एक देश/प्रदेश/संभाग में खाद्य पदार्थों की कुल मात्रा (उत्पादित एवं उपलब्ध) को एकत्र किया जाता है जो कि मनुष्य के उपयोग के अनुरूप है एवं बाजार में आ गई है। अलग-अलग स्रोतों से एक निश्चित अवधि तक साल में जितनी बार भोज्य पदार्थ (उदाहरण-गेहूँ) उत्पादित हुआ है उसका लेखा प्राप्त किया जाता है। खाद्य पदार्थ की उत्पादित कुल मात्रा से जितनी मात्रा पशुओं के लिए उपयोग में लाई गई, विदेश भेजी गई (निर्यात द्वारा), बीज के रूप में संग्रहित की गई तथा संग्रहण/परिवहन, वितरण में नष्ट हो गई उसका विवरण भी एकत्रित किया जाता है। सांख्यिकी के आधार पर उक्त भोज्य पदार्थ की प्रति इकाई प्रतिदिन उपलब्ध मात्रा की गणना की जाती है।

खाद्य संतुलन लेखा विधि के प्रयोग से यह स्पष्ट हो जाता है कि उक्त अवधि में संबंधित स्थान के मनुष्यों को उपयोग हेतु अमुक भोज्य पदार्थ कितनी मात्रा में उपलब्ध था। यह विधि कुछ योजनाओं के लागू करने पर उन पर नियंत्रण रखने हेतु प्रभावशील है। उत्पादन नष्ट होने, जैसी आपातकालीन स्थितियों पर नियंत्रण के लिए उक्त विधि उपयोगी है।

कुछ पोषण संबंधी समस्याओं का समाधान ढूंढ़ने हेतु इस विधि के परिणामों का उपयोग हो सकता है। उक्त भोजन संतुलन लेखा सर्वेक्षण परिणाम में निम्नलिखित सीमितताएं पाई जाती हैं:

i. वास्तविक उपभोग की गई/ग्रहण की गई मात्रा के संबंध में जानकारी नहीं मिलती।
ii. भोज्य पदार्थ की अलग-अलग प्रक्रिया में नष्ट हुई मात्रा का लेखा उपलब्ध नहीं हो पाता। उदाहरणतया छिलके, बीज, रेशे के रूप में भोज्य पदार्थ की नष्ट होने वाली मात्रा के संबंध में जानकारी प्राप्त नहीं होती।
iii. स्वास्थ्य एवं पोषण हेतु इसका उपयोग नहीं हो सकता क्योंकि इससे प्रति व्यक्ति ग्रहण की जाने वाली मात्रा उपलब्ध नहीं हो पाती जिससे पोषक तत्वों की शरीर को प्राप्त मात्रा की गणना नहीं हो सकती।

(2) खाद्य सूची विधि

सामान्यतः यह विधि संस्थाओं, होस्टलों, आश्रमों, अनाथालयों, आर्मी कैम्पों जैसे स्थानों के लिए अत्यधिक उपयुक्त है जहाँ पर एक समान आयु समूह के लोग एक ही स्थान पर दिन-भर के भोजन हेतु निर्भर रहते हैं। व्यक्ति/परिवार/घरों के लिए यह विधि कुछ आंशिक परिवर्तन के साथ उपयोग में लाई जा सकती है।

आहार सर्वेक्षण की विधि के अन्तर्गत एक निश्चित अवधि हेतु (उदाहरणः सात/दस दिन) भोज्य पदार्थ की उपलब्ध मात्रा को लॉग बुक में सूचीबद्ध कर लिया जाता है। अवधि के अन्तिम दिन शेष बची खाद्य पदार्थ की मात्रा को पूर्व में अंकित उपलब्ध मात्रा के सामने सूची में शामिल कर लिया जाता है। सर्वेक्षण की अवधि में प्रतिदिन खरीदे गये खाद्य पदार्थ, जैसे ब्रेड, फल, सब्जी, बिस्किट इत्यादि को सूची में अंकित किया जाता है। साथ ही इस अवधि में संस्था/परिवार के अतिरिक्त बाहर से आये सदस्यों की संख्या एवं व्यक्तिगत भिन्नता, जैसेः आयु, लिंग, क्रियाशीलता तथा भोजन में सम्मिलित होने का समय/अवधि लॉग बुक में अंकित किया जाता है।

लॉग बुक में अंकित करने का कार्य संस्था/परिवार के किसी सदस्य द्वारा सम्पादित किया जाता है। सर्वेक्षण की अवधि समाप्त होने पर निम्न सूत्र के प्रयोग से प्रतिव्यक्ति/प्रतिदिन उपयोग में लायी गई भोज्य पदार्थ की मात्रा की गणना की जाती हैः

प्रति व्यक्ति/प्रतिदिन (उक्त) खाद्य पदार्थ की मात्रा (ग्राम में):

$$\frac{\text{खाद्य पदार्थ की आरम्भिक मात्रा (ग्राम) - अवधि समाप्त होने पर शेष मात्रा (ग्राम)}}{\text{कुल व्यक्तियों की संख्या, जिन्होंने भोजन में भाग लिया} \times \text{सर्वेक्षण अवधि}}$$

खाद्य सर्वेक्षण की इस अवधि में खाद्य पदार्थ की प्रतिदिन/प्रतिव्यक्ति उपलब्ध मात्रा की ही जानकारी हो सकती है, परन्तु वास्तविक ग्रहण की गई भोज्य पदार्थ की नहीं। परिवार/संस्था के व्यक्ति द्वारा अंकित सूची में किसी भूल का प्रभाव सब पर पड़ता है जो प्रतिव्यक्ति/प्रतिदिन उपलब्ध भोज्य पदार्थ की मात्रा पर पड़ता है। सर्वेक्षण की इस अवधि से एक छोटी अवधि में बहुत बड़े समूह का सर्वेक्षण संभव है। संबंधित व्यक्ति के सहयोग पर इस विधि के निर्णय/परिणाम निर्भर है। साक्षर, सहयोग प्रदान करने में तत्पर, आर्थिक-दृष्टि से संस्था पर निर्भर तथा नौकरीपेशा व्यक्ति/समूह के लिए यह आहार सर्वेक्षण विधि उपयुक्त है जहाँ पर समस्त भोज्य पदार्थ बाजार भाव से खरीद कर प्रयोग में लाये जाते हैं।

(3) खाद्य पदार्थों के भार द्वारा

खाद्य सर्वेक्षण की इस विधि में भोज्य पदार्थों का वास्तविक वजन तराजू से (ग्राम/किलोग्राम) लेकर प्रारूप में भोज्य पदार्थ के नाम के सन्मुख तारीखवार सूचीबद्ध किया जाता है। खाद्य पदार्थों के भार द्वारा आहार सर्वेक्षण की विधि में कच्चा एवं पका हुआ दोनों प्रकार के भोज्य पदार्थों को तोलकर पोषण स्तर की गणना हेतु प्रयोग में लाया जा सकता है।

सर्वेक्षण की इस विधि में सर्वेक्षणकर्ता के पास या संस्था/परिवार के पास एक सुग्राही तुला होना आवश्यक है। संस्था में खाद्य पदार्थों का वजन पकने के पूर्व एवं पश्चात् दोनों सम्भव हो सकता है।

परिवार में खाद्य पदार्थों का वजन पकने के पूर्व एवं पश्चात् लेने में काफी व्यवहारिक कठिनाई आती है। सामान्यतः कच्चे (पकने से पहले) खाद्य पदार्थों को तोलकर सूची में वजन अंकित करना एवं दिनभर उसका उपयोग होने को सुनिश्चत करना सम्भव हो पाता है। संस्था/परिवार में तोले हुये खाद्य पदार्थ के अलावा/स्थान पर अन्य खाद्य पदार्थ के उपयोग/प्रयोग को भी सूची में सम्मिलित किया जाता है।

खाद्य सर्वेक्षण की इस विधि के प्रयोग हेतु सामान्यतः सर्वेक्षण की अवधि सात दिन की उत्तम रहती है। सर्वेक्षणकर्ता को सर्वेक्षण के लिए चयनित परिवार/संस्था में प्रतिदिन दो बार-सुबह एवं शाम पहुँचकर उपयोग के लिए आयोजित खाद्य पदार्थों (खाने योग्य) का वजन सर्वेक्षण प्रारूप में पकने से पूर्व लिख लिया जाता है। विशेष ध्यान रखने की बात यह है कि सर्वेक्षणकर्ता भोजन हेतु नियोजित खाद्य पदार्थों की खाने योग्य मात्रा का ही भार दर्ज करता है। छिलके, बीज, रेशे को जहाँ तक हो सके हटा दिया जाता है।

परिवार/संस्था के प्रत्येक व्यक्ति के बारे में सामान्य जानकारी उदाहरणत: आयु लिंग, क्रियाशीलता, विशेष अवस्था जैसेः गर्भावस्था, धात्री अवस्था के बारे में जानकारी एकत्रित कर ली जाती है। परिवार/संस्था के बाहर का कोई व्यक्ति/सदस्य मेहमान/अतिथि जिस दिन और समय भोजन में सम्मिलित हो रहे होते हैं, उनकी भी जानकारी (आयु, लिंग, क्रियाशीलता, अवस्था आदि) इकट्ठी कर लिख ली जाती है।

खाद्य पदार्थ यदि पशुओं, अतिथियों, दान-धर्म हेतु पकाया जाता है तो उसका भी विवरण रखा जाता है। साथ ही घर/संस्था का कोई व्यक्ति किसी दिन/समय घर के बाहर भोजन/नाश्ता आदि करता है तो इसकी विस्तृत जानकारी उसी दिन के विवरण/ब्यौरे में लिख कर रखी जाती है। सर्वेक्षण हेतु सामान्यतः ऐसे सप्ताह का चयन नहीं करना चाहिए जिसमें:

- घर के कुछ सदस्य घर से बाहर गये हों,
- अधिकतर बाहर के लोग (मेहमान) घर में आते हों,
- घर का कोई सदस्य बीमार हो,
- उपवास के दिन अधिक हों,
- विशेष अवसर, त्यौहार, आयोजन के दिन हों।

सर्वेक्षणकर्ता को इस बात का विषेष ध्यान रहे कि वह परिवार/संस्था के किसी भी व्यक्ति/खाद्य पदार्थ के नाम तथा वजन हेतु निर्भर न रहे। ऐसा करने से धोखा हो सकता है। सर्वेक्षण के प्राथमिक कार्य के रूप में चयनित परिवार/संस्था से प्राप्त सात दिन में उपयोग में लाई गई खाद्य पदार्थ की मात्रा

से गणना कर इस निष्कर्ष पर पहुँचा जाता है कि प्रति-व्यक्ति प्रतिदिन खाद्य पदार्थ की कितनी मात्रा (ग्राम/मिलीलीटर) ग्रहण की गई।

संस्था जहाँ पर सभी सदस्य लगभग एक ही आयु समूह एवं क्रियाशीलता के हों, उपर्युक्त प्रकार की गणना उचित है अर्थात् इस सूत्र के अनुसारः

$$\text{खाद्य पदार्थ प्रतिव्यक्ति/प्रतिदिन मात्रा} = \frac{\text{कच्चे खाद्य पदार्थ की मात्रा (ग्राम)}}{\text{व्यक्तियों की संख्या} \times \text{सर्वेक्षण की अवधि}}$$

परिवार में/संस्था में जहाँ छोटे बड़े सभी व्यक्तियों की/सदस्यों की आयु अलग-अलग होती है, सर्वेक्षण में भोज्य पदार्थ की गणना प्रतिदिन प्रतिभोज्य पदार्थ-प्रति उपभोक्ता इकाई करना अधिक उपयुक्त है। प्रतिव्यक्ति/प्रति उपभोक्ता इकाई प्रतिदिन प्रति खाद्य पदार्थ की मात्रा ग्राम या मिलीलीटर में ज्ञात कर लेने पर भोज्य तत्वों की शरीर को उपलब्ध मात्रा ज्ञात की जाती है। (पोषक तत्वों की प्रतिशत मात्रा के आधार पर)।

आहार सर्वेक्षण की इस विधि से ज्ञात पोषक तत्वों की प्रतिव्यक्ति प्रतिदिन की मात्रा को निर्धारित मात्रा से तुलना कर संबंधित का पोषण स्तर ज्ञात किया जाता है।

उपभोक्ता इकाई: परिवार के सदस्यों की आयु भिन्न रहती है। अतः खाद्य पदार्थों की प्रतिदिन की प्रतिव्यक्ति भोज्य पदार्थों की औसत मात्रा सत्य एवं संभव प्रतीत नहीं होती क्योंकि आयु, लिंग तथा कार्यशीलता के अनुसार व्यक्ति अलग-अलग मात्रा में भोज्य पदार्थों का उपभोग करता है। प्रत्येक व्यक्ति स्वयं के शरीर की ऊर्जा की आवश्यकता शरीर की वृद्धि, अपक्षय एवं स्वास्थ्य को बनाये रखने हेतु वयस्क उपभोक्ता इकाई प्रतिव्यक्ति, प्रतिदिन आयु, लिंग एवं क्रियाशीलता के अनुरूप निर्धारित की गई है, जैसे-

	उपभोक्ता इकाई
वयस्क पुरूष (साधारण क्रियाशीलता)	1.00
(मध्यम क्रियाशीलता)	1.2
(अधिक क्रियाशीलता)	1.6
वयस्क महिला (साधारण क्रियाशीलता)	0.8
(मध्यम क्रियाशीलता)	0.9
(अधिक क्रियाशीलता)	1.2

किशोरावस्था	2-21 वर्ष	1.0
बालक	9-12 वर्ष	0.8
	7-9 वर्ष	0.7
5-7 वर्ष	0.6	
3-5 वर्ष	0.5	
1-3 वर्ष	0.4	

स्रोत: Textbook of Human Nutrition by Mahtab S. Bamji *et al* (Eds.), Oxford and Ibh Publishing Co. Pvt. Ltd., pp. 129

शिशुओं को उपभोक्ता इकाई में सम्मिलित नहीं किया जाता। उपभोक्ता इकाई का उपयोग तभी सही निष्कर्ष देता है जब वितरण प्रणाली उत्तम तथा योग्य हो तथा परिवार में सभी व्यक्ति स्वस्थ हों। भोज्य तत्वों की गणना में कैलोरीज की गणना के लिए उपभोक्ता इकाई अधिक उपयुक्त है, अन्य भोज्य तत्व जैसे- प्रोटीन, लवण, विटामिन इत्यादि के लिए नहीं।

आहार सर्वेक्षण की इस विधि का प्रमुख लाभ यह है कि प्रत्येक खाद्य पदार्थ का वास्तविक भार ज्ञात हो जाता है। यद्यपि इसमें-

- समय अधिक व्यय होता है,
- परिवार के सदस्यों का सर्वेक्षण की पूर्ण अवधि में सहयोग अनिवार्य है।

(4) खाद्य पदार्थों पर व्यय के स्वरूप द्वारा

आहार सर्वेक्षण की इस पद्धति में एक विशेष प्रश्नावली/प्रारूप का गठन किया जाता है जिसमें भोज्य पदार्थ एवं अन्य वस्तुओं पर किया व्यय/खर्चा अंकित किया जाता है।

सर्वेक्षण की अवधि एक महीना या एक सप्ताह रहती है। इस सर्वेक्षण पद्धति में काफी समय व्यतीत करना पड़ता है क्योंकि एक-एक खाद्य पदार्थ की कीमत एवं प्रतिदिन का आहार का स्वरूप रिकॉर्ड किया जाता है। सर्वेक्षण के पश्चात् भोज्य पदार्थ के नाम, कीमत एवं आहार में स्थान (भोज्य पदार्थ का) का तुलनात्मक अध्ययन कर पोषण-स्तर ज्ञात किया जाता है। सर्वेक्षण की इस विधि में अत्यधिक प्रशिक्षित सर्वेक्षणकर्ताओं की आवश्यकता रहती है जो भोज्य पदार्थ की कीमत/व्यय से उनका वजन ज्ञात कर तुलना कर सकें।

(5) आहारीय इतिहास

आहार सर्वेक्षण की यह विधि व्यक्ति/परिवार/समूह के आहार की गुणात्मक जानकारी उपलब्ध करा सकती है। इस विधि से खाद्य पदार्थों के उपभोग करने संबंधी जानकारी मिलती है, जैसे खाद्य पदार्थों काः

- आहार में प्रतिदिन/प्रतिसप्ताह/प्रतिमाह उपस्थित रहना
- प्रति अवसर उपस्थित रहना
- विशेष अवसरों पर ही उपयोग में लाया जाना।

आहार की पूर्व स्थिति की जानकारी में निम्न बिन्दुओं पर भी जानकारी उपलब्ध हो सकती है, जैसेः

- आहार आयोजन का रूप
- भोजन संबंधी आदतें
- रुचिकर एवं अरुचिकर खाद्य पदार्थों की सूची
- विशेष अवस्था जैसे- गर्भावस्था, धात्रीवस्था, बीमारी में भोज्य पदार्थों का चयन
- शिशु अवस्था में आहार का समय एवं स्वरूप
- सामाजिक तथा सांस्कृतिक रीति-रिवाज
- धार्मिक मान्यताएं।

इस विधि के प्रयोग से कई भोज्य पदार्थों की उपयोग में लायी जाने वाली मात्रा के सम्बन्ध में भी जानकारी उपलब्ध हो जाती है। किसी नये समाज विशेष की भोजन संबंधी विशेषता/स्थिति को ज्ञात करने हेतु यह विधि उपयुक्त है जिसके आधार पर पोषण-स्तर ज्ञात करने की अन्य पद्धति/विधि का चयन सुलभ एवं संभव हो सकता है। सर्वेक्षणकर्ता को सहयोग प्रदान योग्य व्यक्ति/परिवार/संस्था का चयन करने में मदद मिलती है। खाद्य सर्वेक्षण की इस विधि हेतु विशेष उपकरण/प्रशिक्षण/गणना सूत्र आदि जटिल प्रक्रिया की आवश्यकता नहीं होती। अतः इस विधि से कम से कम समय में बहुत बड़ी संख्या में परिवारों/संस्थाओं का सर्वेक्षण सम्भव होता है।

(6) मौखिक प्रश्नावली

मौखिक प्रश्नावली द्वारा गुणात्मक एवं मात्रात्मक रूप में खाद्य पदार्थों की उपयोग में लायी गई मात्रा के संबंध में जानकारी प्राप्त करने हेतु खाद्य सर्वेक्षण की इस विधि का उपयोग/प्रयोग किया जाता है। चयनित परिवारों से ही सर्वेक्षण हेतु सम्पर्क किया जाता है। सर्वेक्षण की इस पद्धति के प्रारूप में सर्वप्रथमः

i. मौखिक प्रश्नावली में एक या तीन दिन के भोजन संबंधी प्रश्नों के उत्तर गृहणी से/व्यक्ति से किये जाते हैं जो स्वयं भोजन पकाती हैं एवं परिवार के सदस्यों को परोसती हैं।

ii. प्रश्नावली (प्रारूप) में सुबह का नाश्ता, दोपहर का भोजन, शाम का नाश्ता एवं रात्रि के भोजन, या

- प्रातः 6 से 10 बजे तक
- दोपहर 10 से 2 के मध्य
- शाम 2 से 6 के बीच
- रात 6 से 10 के दौरान जो व्यंजन भोजन हेतु बने थे/हैं, उनकी जानकारी प्रतिदिन प्राप्त कर लिख ली जाती है।

iii. प्रत्येक भोज्य व्यंजन बनाने हेतु उपयोग में लाई गई खाद्य पदार्थ की मात्रा (ग्राम में) ज्ञात की जाती है।

iv. व्यंजनों की कुल तैयार मात्रा के बारे में भी जानकारी ली जाती है, जो इस प्रकार हैः

- कुल नाप के रूप में
- कुल मानक कटोरी/कप के नाप के रूप में,

v. परिवार के सदस्यों द्वारा रेसीपी की कुल खायी गई मात्रा के संबंध में भी जानकारी ली जाती है। जैसे- दूध की कुल मात्रा में से प्रत्येक सदस्य द्वारा भोजन के किसी भी समय में प्रयुक्त दूध की मात्रा को भी पूछकर ज्ञात कर लिया जाता है।

vi. खाद्य सर्वेक्षणकर्ता द्वारा लाई गई मानक कटोरी को नाप के लिए प्रयुक्त किया जाता है एवं हर एक खाद्य पदार्थ इसी कटोरी से नाप लेने हेतु प्रयोग में लाया जाता है तथा नाप अंकित किया जाता है। कटोरी के नाम को हर भोज्य पदार्थ के नाम के सन्मुख वजन में परिवर्तित कर लिख लिया जाता है जिससे वास्तविक रूप से भोज्य पदार्थ की उपयोग की गई मात्रा ज्ञात हो जाती है। जिससे भोज्य तत्वों की ग्रहण की गई मात्रा की गणना हो जाने पर पोषण-स्तर ज्ञात कर लिया जाता है।

(7) प्रमुख खाद्य पदार्थ की दोहरी सेम्पल विधि

परिवार/संस्था के चयनित व्यक्ति द्वारा प्रत्येक भोजन के समय में ग्रहण की गई भोज्य पदार्थ के बराबर की मात्रा को नमूने के रूप में अलग इकट्ठा कर लिया जाता है।

उदाहरण के रूप में व्यक्ति ब्रेकफास्ट/सुबह के नाश्ते में यदि ब्रेड अण्डा-1 (2 स्लाइसेस), मक्खन (1 चम्मच), दूध (1 गिलास), केला (एक) उपयोग में लाता है तो इन्हीं भोज्य पदार्थों की इतनी ही मात्रा एक पात्र में एकत्रित कर प्रयोगशाला में विश्लेषण हेतु भेज कर वास्तविक भोज्य तत्वों की ग्रहण की गई मात्रा को ज्ञात कर लिया जाता है। दिन भर के अन्य भोजन के समय में भी इसी क्रम को दोहराया जाता है।

आहार सर्वेक्षण द्वारा पोषण स्तर ज्ञात करने की यह विधि सर्वाधिक सही है तथा त्रुटि रहित है। इस विधि के प्रयोग करने में उपकरण, प्रयोगशाला व्यय, रसायन, प्रशिक्षित सर्वेक्षणकर्ता की अनिवार्यता होने के कारण इसका प्रयोग मात्र प्रयोगात्मक होता है। चयनित व्यक्तियों की संख्या काफी कम रहती है। व्यय/खर्चा सर्वाधिक होने के कारण इस विधि का चलन मात्रा प्रायोगिक तौर पर ही होता है।

खाद्य सर्वेक्षण की किसी भी विधि को उपयोग में लाने के दौरान निम्न बिन्दुओं पर ध्यान दें, जैसे-

i. शिशु एवं छोटे बच्चों के लिए पकाये जाने वाले खाद्य पदार्थ का विवरण अलग से रखें/लिखें।
ii. खाद्य पदार्थ की वह मात्रा जो परिवार/संस्था के अलावा अन्य स्थान पर उपयोग आयी हो, उसे भी अलग से लिखें जैसे- अतिथि, संबंधी, नौकर, पशु इत्यादि।
iii. घर में अथवा के बाहर भोजन के अलावा खाये गये भोज्य पदार्थों का विवरण रखें।
iv. घर के किसी सदस्य का किसी भोजन के समय घर में अनुपस्थित रहने को नोट करें।
v. परिवार में भोजन के दौरान मेहमानों के आने पर उन्हें परोसे गये भोज्य पदार्थों का विवरण अलग से रखा जाये।
vi. उपवास, त्यौहार, विशेष रोग की अवस्था एवं विशेष अवसरों पर आयोजित भोजन व्यवस्था को सर्वेक्षण में शामिल करने पर विचार करें।

खाद्य सर्वेक्षण-विधि का चयन/अवधि

1. खाद्य सर्वेक्षण की उपयुक्त विधि का चुनाव करने से पहले सर्वेक्षण उद्देश्य, सर्वेक्षणकर्ता को उपलब्ध समय, सर्वेक्षणकर्ताओं की संख्या, सर्वेक्षण हेतु उपलब्ध सहयोग, सांख्यिकीय महत्व इत्यादि बिन्दुओं पर विचार करना चाहिए।
2. सर्वेक्षण की विधि निश्चित करने पर जानकारी लिखकर रखने हेतु प्रारूप तैयार किया जाता है। प्रारूप की भाषा सरलतम तथा अधिकतर लोगों को समझने लायक होनी चाहिए। प्रारूप की आवश्यक प्रतिलिपियाँ तैयार कर लेनी चाहिए।
3. सर्वेक्षण की तिथि, समय एवं अवधि को निश्चित कर प्रारूप के उपयोग से सर्वेक्षण सम्पन्न कर लिया जाता है।
4. व्यक्ति/परिवार/संस्था अर्थात नमूना (sample) का चयन सांख्यिकी की मदद से करना पड़ता है। व्यक्ति तथा परिवार की संख्या (कम से कम पचास) का चयन करने के पश्चात् समाज में से उनका चयन निम्नलिखित विधियों के द्वारा किया जाता है।

खाद्य सर्वेक्षण अवधि

खाद्य सर्वेक्षण का उद्देश्य, सर्वेक्षण की अवधि निर्धारित करता है। सर्वेक्षण की एक दिन की अवधि कई व्यक्तिगत बातों से प्रभावित होती है। कई बार सर्वेक्षण हेतु तीन दिन की अवधि को अधिक प्रभावी माना जाता है। खाद्य पदार्थों का उपयोग, खरीद, वितरण, आदतें इत्यादि उद्देश्य के लिए किये जाने वाले सर्वेक्षण की अवधि अधिकतम सात दिन की होती है।

खाद्य सर्वेक्षण के निष्कर्षात्मक अर्थ तथा विश्लेषण

आहार के प्रारूप को वर्गीकृत, सारणीकरण एवं गणना करके निम्नलिखित दो प्रकार से निष्कर्ष निकाले जाते हैं:

(1) विवरणात्मक निष्कर्ष: विवरणात्मक निष्कर्षों में सर्वेक्षण का गुणात्मक स्वरूप प्रमुख रहता है जैसे-

- प्रमुखतः स्थान विशेष में उपलब्ध खाद्य पदार्थों के प्रकार, व्यंजन के स्वरूप, आहार में संबंधित खाद्य पदार्थों का स्थान।
- स्थान विशेष पर पोषण-स्तर प्रभावित करने वाले सामाजिक, आर्थिक, सांस्कृतिक कारकों का पता चलता है।
- पौष्टिक/सम्पूरक खाद्य पदार्थों के संबंध में सुझाव तथा पोषण कार्यक्रम के लिए आहार के नमूने के आधार पर कृषि उत्पादन, संग्रहण तथा वितरण संबंधी सुझाव।

(2) विश्लेषणात्मक निष्कर्ष: विश्लेषणात्मक निष्कर्षों में खाद्य पदार्थों का मात्रात्मक स्वरूप कई प्रकार से गणना कर वर्णित होता है, जैसे-

- प्रति इकाई उपयोग में लाई गई खाद्य पदार्थों की प्रतिदिन की मात्रा।
- प्रति इकाई/प्रतिदिन उपयोग में आयी पोषक तत्वों की मात्रा।
- प्रति इकाई/प्रतिदिन/प्रति पोषक तत्व की मात्रा की निर्धारित पोषक तत्व की मात्रा से तुलना।

4.4.2 बायोफिजिकल एवं शरीर रचनात्मक मूल्यांकन

व्यक्तियों के नियमित पोषण सर्वेक्षण के लिए रेडियोलॉजिकल एवं शारीरिक नाप की विधियाँ उपयोग में नहीं लाई जाती हैं। इनका उपयोग सिर्फ उन्हीं विशिष्ट अवस्थाओं में किया जाता है जब अस्थि या शारीरिक और पेशीय क्षमता संबंधी परिवर्तनों के बारे में अतिरिक्त जानकारी की आवश्यकता पड़ती हो। रिकेट्स, ऑस्टीओमेलेशिया, इन्फेन्टाइल स्कर्वी, फ्लोरोसिस, प्रोटीन-ऊर्जा कुपोषण आदि में अस्थियों में होने वाले परिवर्तनों का अध्ययन करने के लिए रेडियोलॉजिकल विधि का उपयोग किया जाता है। कुछ शारीरिक परीक्षण के अन्तर्गत आँखों का अंधकार अनुकूल

(विटामिन 'ए' की कमी के लिए), कोशिकीय रक्तवाहिकाओं की क्षतिमयता (विटामिन 'सी' की कमी के लिए) परीक्षण, सम्मिलित है।

शरीर रचनात्मक मूल्यांकन के लिए उपयोग में लाये जाने वाले शरीर के प्रमुख नाप निम्न हैं-

व्यक्ति/बालक का

a. भार
b. ऊँचाई
c. सिर का घेरा
d. सीने का घेरा
e. बाँह का घेरा
f. त्वचा के मोड़

उपर्युक्त समस्त शरीर के विभिन्न अंग के नाप में वजन तथा ऊँचाई प्रमुख नाप हैं। नापों का उपयोग विशिष्ट उद्देश्य से किया जाता है।

(1) भार: पोषण स्तर निर्धारण के मानवमितिय परीक्षण विधि में वजन सबसे सरल तथा महत्वपूर्ण नाप है। इसका प्रयोग अत्यधिक किया जाता है।

पोषण स्तर निर्धारण वजन पर काफी निर्भर है क्योंकि शरीर का वजन शरीर के अंदर के सरल द्रव एवं ठोस अवयवों की वृद्धि एवं विकास का परिणाम है तथा समस्त भोज्य तत्वों का चयापचय सामान्य एवं पूर्ण होने का भी परिणाम है।

एक व्यक्ति/बालक का निर्धारित अवधि के पश्चात् वजन लेकर रिकॉर्ड रखना उसके पोषण स्तर के उतार-चढ़ाव को परोक्ष रूप से दर्शाता है। बालकों के समूह में कितने बालक सामान्य से कम वजन के हैं यह ज्ञात करने के लिए वजन लिया जाता है तथा सभी कम वजन के बालक अपर्याप्त पोषण के प्रभाव को दर्शाते हैं। गर्भवती महिला तथा किसी रोग/बीमारी के उपचार के पश्चात् वजन में वृद्धि/परिवर्तन उचित पोषण को दर्शाता है। बालक/व्यक्ति का वजन कई बातों से प्रभावित होता है। अतः पोषण-स्तर मानवमिति परीक्षण के द्वारा ज्ञात करने हेतु वजन का प्रयोग करते समय/वजन लेते समय निम्न बातों का सावधानीपूर्वक ध्यान रहे जैसे-

- वजन नापने की मशीन केवल मनुष्य का वजन नापने की ही हो तथा उपयोग पूर्व इसका निरीक्षण किया गया हो।
- बालक/व्यक्ति कम से कम कपड़े पहने हुआ हो।
- वजन करने के 10-15 मिनट पूर्व उसने कोई पेय पदार्थ न लिया हो।
- वजन करने के 3-4 घण्टे पूर्व भोजन किया गया हो।

- वजन करने के पूर्व यथा संभव लघु शंका से निवृत्त हुआ हो।
- वजन लेने का समय जहाँ तक संभव हो सुबह का हो।
- जूते/चप्पल न पहनें हुए हों।
- वजन लेते समय व्यक्ति सीधा खड़ा हो, किसी दीवार या व्यक्ति वस्तु से सटकर नहीं।

बालक/व्यक्ति का वजन कई बातों से प्रभावित होता है, अतः शरीर का वजन शरीर के अन्य किसी नाप के अनुपात में ज्ञात करना अधिक योग्य है। अधिकांश समय वजन ऊँचाई के अनुपात में व्यक्त किया जाता है।

(2) ऊँचाई: ऊँचाई अधिकतर आनुवांशिक एवं वातावरण से निर्धारित होती है। पोषण/स्वास्थ्यकर स्थिति में ऊँचाई विकसित होती है। पोषण-स्तर पर ऊँचाई का प्रभाव केवल बालकों की विकास की अवधि में ही दिखाई देता है। अपर्याप्त पोषण तथा बीमारी के दौरान भोज्य तत्व कोशिकाओं तक न पहुँच पाने के कारण ऊँचाई प्रभावित होती है। पीढ़ी दर पीढ़ी अपर्याप्त पोषण तथा बीमारी का प्रभाव शरीर की ऊँचाई में अपर्याप्त वृद्धि के रूप में (ऊँचाई कम व बौनापन) दृष्टिगत होती है। विशेष ध्यान में रखने की बात यह है कि जन्म के समय शिशु की ऊँचाई सामान्य रहती है। परन्तु पोषण तत्व एवं बीमारी के उपचार में कमी ऊँचाई बढ़ने में बाधा उत्पन्न करती है।

शिशु की ऊँचाई लेटे हुए नापी जाती है जिसे 'इन्फन्टोमीटर' कहते हैं। शिशु की लम्बाई/ऊँचाई सिर से तलवे तक होती है। किसी बड़े बालक या व्यक्ति की ऊँचाई सपाट सतह पर 'स्टेडियोमीटर' उपकरण रखकर नापी जाती है तथा नापते समयः

(1) व्यक्ति/बालक स्टेण्ड पर सीधा खड़ा हो

(2) जूते/चप्पल न पहने हों

(3) दोनों एड़ी एक साथ जुड़ी हों

(4) दोनों पंजे अलग हों (लगभग 45^0 कोण में)

(5) सिर पर स्केल को कुछ दबाकर रखा जाए

(6) व्यक्ति/बालक के सामने खड़े होकर ऊँचाई पढ़कर लिख लिया जाये

जांघों की हड्डी (फीमर बोन) शेष हड्डी के ढांचे की तुलना में जल्दी बढ़ती है जिससे बैठकर ऊँचाई एवं कमर से पाँव तक की ऊँचाई प्रभावित होती है। वातावरण, आनुवंशिकता, लिंग तथा आयु भी पोषक तत्वों के साथ ऊँचाई को प्रभावित करती है। वजन तथा ऊँचाई के नाप बालकों के

समूह का पोषण स्तर निम्न, मध्यम (सामान्य) तथा उच्च-स्तर की शारीरिक वृद्धि तथा विकास को बताते हैं जिससे आवश्यकता पड़ने पर समूह में सम्मिलित बालकों का पोषण स्तर उत्तम करने में सहायता मिलती है।

(3) सिर का घेरा: सिर का घेरा प्रमुखतः शारीरिक विकास में मस्तिष्क के आकार तथा सामान्यतः अस्थि एवं ऊतकों से संबंधित रहता है। सिर का घेरा नापने हेतु फायबर ग्लास टेप का प्रयोग उत्तम रहता है। सिर का घेरा आँख के ऊपर से पीछे के अधिकतम उभरे भाग के ऊपर से नापकर रिकॉर्ड किया जाता है। बालकों/शिशुओं की आयु के प्रथम वर्ष में सिर का घेरा बढ़ता है। एक वर्ष तक की आयु में सिर के घेरे में वृद्धि आयु के साथ-साथ होती है। स्वास्थ्य तथा पोषण का उस पर कम प्रभाव पड़ता है। सिर का घेरा बालक की आयु निर्धारण करने में भी उपयोगी है। स्वास्थ्य एवं पोषण का प्रभाव सिर के घेरे पर बालक की आयु के दूसरे वर्ष से दिखाई देता है। इस आयु में सिर का घेरा तथा छाती का घेरा बालकों में प्रोटीन कैलोरी पोषण को बताता है।

(4) छाती का घेरा: आयु के दूसरे तथा तीसरे वर्ष में छाती या सीने का घेरा नाप से पोषण-स्तर निर्धारण किया जाता है। छाती का घेरा नापने हेतु फायबर ग्लास टेप का प्रयोग ही अच्छा होता है। श्वसन की मध्यम अवस्था में टेप सीने के ऊपर से पीछे ले जाकर छाती के घेरे का नाप रिकॉर्ड किया जाता है। एक साल के स्वस्थ बालक का सिर व छाती का घेरा बराबर रहता है। एक साल की आयु के उपरांत छाती का घेरा सिर के घेरे की अपेक्षा अधिक हो जाता है। अतः यदि एक से पाँच साल की आयु के बालकों का सिर का घेरा छाती के घेरे से कम है तो इसका अर्थ बालक के शारीरिक विकास में अवरूद्धता हो जाना है। पाँच से छः साल की आयु के बाद पोषण-स्तर हेतु सिर/छाती के घेरे का नाप उपयुक्त नहीं है। छाती के घेरे के नाप का उपयोग प्रोटीन कैलोरी कुपोषण, पोषण की स्थिति तथा अवस्था ज्ञात करने हेतु किया जाता है।

(5) बाँह का घेरा: कंधा तथा कुहनी के मध्य का अधिकतम घेरा बाँह का घेरा है। इसे फायबर ग्लास टेप से ही नाप लिया जाना चाहिए। बचपन के दिनों में प्रोटीन कैलोरी कुपोषण को जानने का यह एक आसान एवं सरल तरीका है।

(6) त्वचा के मोड़: कैलीपर्स द्वारा शरीर में त्वचा के नीचे संग्रहित उपचर्म वसा (Subcutaneous fat) नापकर शरीर का संगठन ज्ञात कर सकते हैं।

बाँह की त्वचा के मोड़ों में वसा की मात्रा (Fat fold and Triceps): बाँह के घेरे के स्थान पर अंगूठे व तर्जनी से त्वचा पकड़कर (चिमटी में) थोड़ा सा खींचकर (लगभग 1 से. मी.) बनी झुर्री की मोटाई कैलीपर्स द्वारा नापी जाती है एवं रिकॉर्ड की जाती है।

पीठ की हड्डी के नीचे त्वचा के मोड़ में वसा की मात्रा: पीठ की हड्डी के नीचे एवं रीढ़ की हड्डी के बाईं या दाईं तरफ एकत्र वसा लगभग एक जैसे रहती है। बाँह के घेरे की ही तरह कैलीपर्स द्वारा यहाँ भी त्वचा की झुर्री की मोटाई नाप कर रिकॉर्ड की जाती है। कई तरह के कॅलीपर्स का उपयोग किया जाता है।

4.4.3 बायोकेमिकल टेस्ट (जैवरासायनिक विधियाँ)

रक्त या मूत्र में विभिन्न पोषक तत्वों का स्तर ज्ञात करने के लिए जीव रासायनिक विधियों का उपयोग किया जाता है। किसी व्यक्ति की पोषण स्तर की अवस्था से संबंधित विश्वसनीय आंकड़े पोषक तत्व के मान से ज्ञात किये जा सकते हैं। चूँकि इन परीक्षणों के लिए अच्छी तरह से सुसज्जित प्रयोगशाला और पर्याप्त कर्मचारियों की आवश्यकता होती है, इसलिए इनका उपयोग व्यक्तियों में नियमित पोषण सर्वेक्षण के लिए नहीं किया जाता है। चूँकि 24 घण्टे के मूत्र का नमूना एकत्रित करना कठिन होता है इसलिए 6 घण्टे का ही मूत्र का नमूना एकत्रित किया जाता है। कुछ व्यक्तियों के पोषण सर्वेक्षण में उपयोग की जाने वाली जीव रासायनिक विधियों का उल्लेख तालिका में किया जा रहा है।

पोषण सर्वेक्षण में उपयोग की जाने वाली कुछ जीव रासायनिक विधियाँ

क्र.सं.	पोषक तत्वों की कमी	रक्त में उपस्थित अवयवों का मापन परीक्षण	मूत्र में उपस्थित अवयवों का मापन परीक्षण
1.	प्रोटीन	कुल सीरम प्रोटीन, सीरम, एल्ब्यूमिन	कुल यूरिया, कुल क्रिएटिनिन हाइड्रॉक्सिप्रोलिन
2.	विटामिन A	सीरम, विटामिन A, कैरोटीन	
3.	विटामिन D	सीरम इनआर्गेनिक फास्फेट, सीरम एल्केलाइन फॉस्फेटेज, शिशुओं और स्तनपान छुड़ाये बालकों में	
4.	एस्कॉर्बिक एसिड	सीरम एस्कॉर्बिक एसिड W.B.C. एस्कॉर्बिक एसिड	मूत्रीय एस्कॉर्बिक एसिड भार परीक्षण
5.	थायमिन	R.B.C. ट्रांसकीटोलेज, रक्त पाइरूवेट	मूत्रीय थायमिन परीक्षण
6.	राइबोफ्लेविन	R.B.C. राइबोफ्लेविन	मूत्र में राइबोफ्लेविन मापन परीक्षण

7.	नियासीन		6- मिथाइल निकोटिनामाइड और पाइरिडोन का मूत्रीय उत्सर्जन
8.	लौह लवण	रक्त में हीमोग्लोबिन सीरम आयरन (लौह लवण)	
9.	आयोडीन	थाइराइड कार्य के लिए परीक्षण	मूत्रीय आयोडीन

स्रोत: Standard ICMR Format for Assessment and Nutritional Status by Clinical Science and Symptoms

4.4.4 क्लीनिकल लक्षण आधारित पोषण मूल्यांकन

पोषणीय मूल्यांकन का सबसे महत्वपूर्ण भाग नैदानिक परीक्षण है, क्योंकि इससे हमें लोगों में होने वाली आहारीय कमियों के लक्षण एवं चिह्नों से प्रत्यक्ष प्रमाण प्राप्त होते हैं। नैदानिक मूल्यांकन में कम से कम त्रुटि होने की दृष्टि से ICMR की न्यूट्रिशन एडवाइजरी कमेटी ने विभिन्न नैदानिक चिन्हों और लक्षणों के मूल्यांकन के लिए एक स्कोर कार्ड तैयार किया है। इस स्कोर कार्ड का उपयोग सम्पूर्ण भारत में सभी पोषणीय सर्वेक्षणों में किया जाता है और पूरक भोज्य-पदार्थों द्वारा पोषणीय अवस्थाओं में होने वाले सुधार का मूल्यांकन करने में यह काफी प्रभावकारी सिद्ध हुआ है। स्कूल में पढ़ने वाले बालकों का शीघ्र पोषण सर्वे करने के लिए कुछ अधिक सामान्य बीमारियों के मूल्यांकन के लिए एक छोटा स्कोर कार्ड तैयार किया जाता है।

पोषणीय मूल्यांकन के क्लीनिकल लक्षण

आहारीय मोटापन	**नियासीन की कमी**
लम्बाई या अस्थिमय ढाँचे के अनुसार अत्यधिक वजन अत्यधिक त्वचीय-मोड़ वक्षस्थल की चौड़ाई की अपेक्षा उदर की अत्यधिक चौड़ाई	पेलाग्रा डर्मेटोसिस, लाल खुरदुरी जबान, जबान में दरारें, जबान के पेपिला की क्षति, गालों और भौहों के ऊपर रंजकता
अल्पपोषण	**विटामिन C की कमी**
शारीरिक और मानसिक सुस्ती, (आहारहीनता) लम्बाई और अस्थिमय ढाँचे के अनुसार वजन में कमी, कम त्वचीय मोड, उठे हुए अस्थिमय उभार, त्वचा के लचीलेपन में कमी	फूले और रक्तस्रावी मसूड़े, फॉलिक्युलर हाइपरकेरेटोसिस, प्रकार 2, धब्बेयुक्त रक्तस्राव

प्रोटीन-कैलोरी कमी की बीमारियाँ	**विटामिन A की कमी**
ईडीमा, पेशीय क्षति, कम शरीर वजन, मनो-प्रेरक परिवर्तन, बालों के रंग की क्षति, बालों का आसानी से टूटना, पतले नरम छितरे बाल, मोटा चेहरा, फ्लेकी पेन्ट डर्मेटोसिस, त्वचा पर फैले हुए धब्बे	त्वचा का शुष्कपन, फॉलिकुलर हाइपरकेरिटोसिस, प्रकार-I कॅन्जन्क्टिवा में शुष्कपन (जीरोसिस) केरेटोमेलेशिया, बाइटॉट स्पॉट्स
थाइमिन की कमी	**राइबोफ्लेविन की कमी**
टखनों के जर्क में शिथिलता, घुटनों के जर्क में शिथिलता, संवेदनों की क्षति और प्रेरक कमजोरी, पिंडली की पेशियों में दर्द, हृदयसंवहनी कार्यों में गड़बड़ी, शोथ अथवा ईडिमा	एन्ग्यूलर स्टोमेटाइटिस, एन्ग्यूलर क्षतिचिनह, काइलोसिस, मेजेन्टा जबान (Magenta tongue) जबान के बीच के पेपिली की क्षति नेजो-लेबियल डिसेबेसिआ (Dyssebace) एन्ग्यूलर पालपेब्राइटिस, स्क्रोटल और वल्वल डर्मेटोसिस, कॉर्निया में रक्तवाहिकाओं का फैलाव
विटामिन D की कमी	
1. बालकों में सक्रिय रिकेट्स- इपिफिसिअल वृद्धि (6 माह से अधिक उम्र वालो में), पसलियों में दर्दहीन गठानें, क्रैनिओटेबीज (1 वर्ष के कम उम्र में), पेशीय अल्पशक्ति। 2. ठीक हुई रिकेट्स (बालकों या वयस्कों में) फ्रन्टल एवं पॉराइटल अस्थियों का बाहर की ओर उठाव (Bossing), आपस में टकराते हुए घुटने या झुके हुए पैर, वक्षस्थल की विकृतियाँ 3. वयस्कों में ऑस्टीओमेलेशिया स्थानीय या व्यापक अस्थिमय ढाँचे की विकृतियाँ	
लौह तत्व	
श्लेष्मिक झिल्लियों में सफेदपन, कॉइलोनिकिआ, जबान के क्षतिग्रस्त पेपिली	
आयोडनी की कमी	
थाईरॉइड ग्रंथि की वृद्धि	
फ्लोरीन की अधिकता (फ्लोरोसिस)	
मॉटल्ड डेन्टल एनामल (आरम्भिक अवस्था में एनामल की कम वृद्धि से अंतर ज्ञात करना कठिन हो जाता है।)	

स्रोत: Standard ICMR Format for Assessment and Nutritional Status by Clinical Science and Symptoms

पोषण स्तर के मूल्यांकन का कार्यक्रम का प्रारूप (ICMR)

1.	**लिंग**	**8.**	**रंजकता (Pigmentation)**
2.	**उम्र**		0. सामान्य रंग
3.	**ऊँचाई**		1. थोड़ा परिवर्तन
4.	**वजन**		2. मध्यम परिवर्तन
5.	**कूल्हों की चौड़ाई**		3. मिट्टी जैसा रंग, गंभीर परिवर्तन
I. सामान्य (General)		**9.**	**निष्कासन स्राव**
6.	**दिखावट**		0. अनुपस्थित
	0. उत्तम		1. पानी जैसा, अत्यधिक आँसू आना
	1. अच्छा		2. श्लेषमा पसयुक्त
	2. खराब		3. पसयुक्त
	3. बहुत खराब	**(B)**	**कॉर्निआ:**
II. आँखें:		**10.**	**जीरोसिस**
(A)	**कॅन्जन्क्टिवा**		0. अनुपस्थित
7.	**जीरोसिस (शुष्कपन)**		1.मामूली शुष्कता और कम संवेदनशीलता
	0. अनुपस्थित, चमकीला, नम		2. धुंधलापन और पारदर्शिता में कमी
	1. आधा मिनट खुले रखने पर कुछ शुष्कता, कम चमकीलापन		3. घाव हो जाना
	2. शुष्क और झुर्रीयुक्त कॅन्जन्क्टिवा	**11.**	**रक्तवाहिकाओं का फैलाव**
	3. बहुत अधिक शुष्क कॅन्जक्टिवा और बिटॉट स्पॉट्स की उपस्थिति		0. अनुपस्थित
			1. कॉर्निया के आसपास रक्त वाहिकाओं का फैलाव
			2. कॉर्निया में रक्तवाहिकाओं का

			फैलाव
(C)	**पलकें:**	**18.**	**सतह**
12.	**घाव (Excoriation)**		0. सामान्य
	0. अनुपस्थित		1. दरारयुक्त
	1. मामूली घाव		2. घावयुक्त
	2. ब्लेफेराइटिस		3. चमकीली
13.	**फॉलिक्यूलोसिस**		**(C) मुंह की श्लेष्मिक झिल्ली:**
	0. अनुपस्थित	**19.**	**स्थिति**
	1. कुछ दानें		0. सामान्य
	2. अत्यधिक दानों से ढकी हुई पलकें		1. स्टोमेटाइटिस
	3. हाइपरट्रॉफी		**(D) मसूड़े**
14.	**एन्यूलर कॅन्जन्क्टिवाइटिस**	**20.**	**स्थिति**
	0. अनुपस्थित		0. सामान्य
	1. उपस्थित		1. रक्तस्रावी और/या जिन्जिवाइटिस
(D)	कार्यात्मक:		2. पायरिया
15.	**रात्रि अन्धता (रतौंधी)**		3. सिकुड़े हुए
	0. अनुपस्थित		**(E) दाँत**
	1. उपस्थित	**21.**	**फ्लोरोसिस**
नोट:	आँखों की उन बीमारियों को छोड़ दीजिये जो पोषणीय कमी से सम्बन्धित नहीं है।		0. अनुपस्थित
III.	**मुँह: (A) ओंठ**		1. चाकू जैसे दाँत
16.	**स्थिति**		2. दाँतों में गड्ढे
	0. सामान्य		3. धब्बेदार/मॉटल्ड

	1. एन्यूलर स्टोमेटाइटिस मंद,	**22.**	**दंत क्षय**
	2. एन्यूलर स्टोमेटाइटिस, गंभीर		0. अनुपस्थित
17.	**रंग**		1. मामूली
	0. सामान्य		2. गंभीर
	1. सफेद किन्तु ढकी हुई नहीं		
	2. लाल		
	3. लाल और खुरदुरी		
IV.	**बाल**ः		
23.	**स्थिति**	**29.**	**हाथ-पैर**
	0. सामान्य		0. सामान्य
	1. चमकीलेपन की कमी		1. सिमेट्रिकल डर्मेटाइटिस, जुराबों या मोजे जैसी रंजकता
	2. शुष्क एवं रंगहीन	**VI.**	वसीय ऊतक (Adipose tissue) (बाइसेप्स पेशी के ऊपर की भुजा के परीक्षण द्वारा मालूम करना)
	3. छितरे हुए एवं झरने वाले	**30.**	**मात्रा**
V.	**त्वचा:** (A) सामान्यः		0. सामान्य
24.	**दिखावट**		1. कमी
	0. सामान्य	**VII.**	ईडीमा
	1. चमकीलेपन की कमी	**31.**	**फैलाव**
	2. शुष्क और खुरदरापन या झुर्रियाँ		0. अनुपस्थित
	3.हाइपरकेरेटोसिस, फ्राइनोडर्मा		1. निर्भरित अंगों पर ईडीमा
25.	**लचीलापन**		2. व्यापक ईडीमा या शोथ
	0. सामान्य	**VIII.**	अस्थियाँ:

	1. कम	32.	स्थिति
	2. झुर्रीयुक्त त्वचा		0. सामान्य
	(B) स्थानीयः		1. पहले हुई रिकेट्स के अवशेष
26.	**धड़ की त्वचा**	**IX.**	**हृदयः**
	0. सामान्य	33.	आकार
	1. गर्दन के आसपास डर्मेटाइटिस और कॉलर जैसी रंजकता		0. सामान्य
27.	**चेहरा**		1.एपेक्स बीट स्तनाग्र रेखा के बाहर
	0. सामान्य		2. बढ़ा हुआ
	1. नेजो-लेबियल सीबोरीआ	**X.**	**आहार तंत्रः**
	2. सिमेट्रिकल सबऑरबिटल रंजकता	**34.**	**भूख**
28.	पेरिनिअम		0. सामान्य
	0. सामान्य		1. कमी
	1. स्क्रोटल या प्यूडेन्डल डर्मेटाइटिस		
35.	**मल त्याग**		
	0. सामान्य		
	1. दस्त		
36.	**यकृत**		
	0. स्पर्शीय नहीं		
	1. स्पर्शीय		
37.	**स्प्लीन**		
	0. स्पर्शीय नहीं		
	1. स्पर्शीय		
XI.	**स्नायविक तंत्रः**		

38.	**टांग की पेशी के दर्द**		
	0. अनुपस्थित		
	1. उपस्थित		
39.	संवेदनों में शून्यता (Paresthesia)		
	0. अनुपस्थित		
	1. उपस्थित		

स्रोत: Standard ICMR Format for Assessment and Nutritional Status by Clinical Science and Symptoms

4.5 सारांश

भारत सहित अन्य विकासशील देशों में कुपोषण तथा अपर्याप्त पोषण का प्रतिशत विकसित देशों की अपेक्षा काफी अधिक है। भारत के अलग-अलग प्रदेशों में विभिन्न आयु के लोगों में व्याप्त पोषण के स्तर की पूर्ण एवं तथ्यपरक जानकारी उपलब्ध नहीं है। कोई भी कार्यक्रम जो पोषण स्तर से संबंधित होता है केवल आरम्भिक रूप में ही सफल हो पाता है। अतः इस दृष्टि से पोषण सर्वेक्षण अत्यंत महत्वूर्ण हैं। पोषण सर्वेक्षणों के कई उद्देश्य हैं जैसे सभी आयु-समूह वाले व्यक्तियों के वजन और ऊँचाई तथा बालकों के विकास की गति का निर्धारण करना, आहारीय कमियों के कारण होने वाली बीमारियों के नैदानिक चिन्ह एवं लक्षण से उनके व्याप्त होने के स्तर का निर्धारण करना और समुदाय में प्रचलित कुपोषण एवं अल्पपोषण को समाप्त करने के तरीके सुझाना। पोषण स्तर ज्ञात करने के उद्देश्य के आधार पर एक अथवा एक से अधिक विधियों/पद्धतियों/प्रणालियों का उपयोग किया जाता है, जैसे खाद्य सर्वेक्षण, बायोफिजिकल एवं शरीर रचनात्मक मूल्यांकन, नैदानिक लक्षण परीक्षण तथा जीवरासायनिक/प्रयोगशाला परीक्षण। इन सब विधियों के समुचित प्रयोग द्वारा पोषण सर्वेक्षण करने पर पूर्ण एवं तथ्यपरक जानकारी उपलब्ध हो सकती है।

4.6 निबंधात्मक प्रश्न

1. पोषण सर्वेक्षणों के उद्देश्य स्पष्ट करें।
2. खाद्य सर्वेक्षण कितने प्रकार के होते हैं? संक्षिप्त विवरण दीजिए।
3. 'उपभोक्ता इकाई' से क्या अभिप्राय है? समझाइये।
4. क्लीनिकल लक्षण आधारित पोषण मूल्यांकन का वर्णन कीजिए।
5. शारीरिक माप (एन्थ्रोपोमैट्रिक) विधियों का ब्यौरा, उपयोगिता सहित लिखिए।

इकाई 5: पोषण का अप्रत्यक्ष मूल्यांकन

5.1 प्रस्तावना
5.2 उद्देश्य
5.3 राष्ट्रीय स्तर पर महत्वपूर्ण आंकड़े
5.4 सूचक और उनका उपयोग
    5.4.1 आयु विशिष्ट मृत्यु दर
    5.4.2 कारण विशिष्ट मृत्यु दर
    5.4.3 कारण विशिष्ट पोषण- प्रासंगिक रुग्णता दर
    5.4.4 पारस्थितिकी कारक
    5.4.5 स्वास्थ्य नीति संकेतक
    5.4.6 सामाजिक संकेतक
    5.4.7 स्वास्थ्य देखभाल प्रावधान के संकेतक
    5.4.8 स्वास्थ्य स्तर संकेतक
5.5 संकेतकों की विशेषताएँ
5.6 संकेतकों का वर्गीकरण
    5.6.1 मृत्यु दर संकेतक
    5.6.2 रुग्णता दर संकेतक
    5.6.3 अक्षमता दरें
    5.6.4 पोषण स्तर संकेतक
    5.6.5 स्वास्थ्य देखभाल प्रदाय संकेतक
    5.6.6 पर्यावरणीय संकेतक
    5.6.7 सामाजिक आर्थिक संकेतक
    5.6.8 स्वास्थ्य नीति संकेतक
    5.6.9 जीवन की गुणवत्ता के संकेतक
    5.6.10 प्राथमिक स्वास्थ्य देखभाल
5.7 सारांश
5.8 निबंधात्मक प्रश्न

5.1 प्रस्तावना

सामुदायिक स्तर पर पोषण स्तर का मूल्यांकन अप्रत्यक्ष विधियों से भी किया जा सकता है जैसे कि मृत्यु दर (शिशु, मातृ, प्रसवकालीन मृत्यु दर), रुग्णता दर और अन्य स्वास्थ्य संबंधी आंकड़े। मृत्यु दर को ऐसे परिभाषित किया जा सकता है- लोगों के एक समूह में, आम तौर पर प्रति हजार मौतों के रूप में व्यक्त मौतों की संख्या। रुग्णता दर से तात्पर्य है- कुल जनसंख्या में लोगों से विभाजित एक समयावधि के दौरान बीमार लोगों की संख्या।। पर्याप्त विशेषज्ञता वाले संस्थान यह आंकड़े एकत्रित करते हैं। इन एकत्रित आंकड़ों को राष्ट्रीय सर्वेक्षणों के लिए प्रयोग किया जाता है। समुदाय में व्याप्त कुपोषण रुग्णता दर एवं मृत्यु दर को प्रभावित करता है। इसके साथ-साथ, रुग्णता दर जनसंख्या के सुमेद्य समूहों, विशेषकर छोटे बालकों के पोषण स्तर को भी प्रभावित करती है। भारत में सैम्पल पंजीकरण योजना नियमित रूप से, मानकीकृत प्रक्रियाओं एवं प्रशिक्षित अन्वेषकों के उपयोग द्वारा सांख्यिकीय रूप से पर्याप्त आंकड़ों पर जानकारी इकट्ठा करती है। वे वार्षिक रिपोर्टों का प्रकाशन करते हैं जिन्हें कई स्तरों में योजनाओं की तैयारी तथा क्रियान्वन हेतु प्रयोग में लाया जाता है। आइए, पोषण के अप्रत्यक्ष मूल्यांकन की विधियों के बारे में विस्तार से जानें।

5.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के उपरान्त छात्र निम्न के बारे में जान पाएंगे;

- पोषण के अप्रत्यक्ष मूल्यांकन की विधियाँ;
- विभिन्न संकेतकों के प्रयोग तथा पोषण और स्वास्थ्य स्तर से संबंधित संकेतकों के बारे में जानकारी; तथा
- स्वास्थ्य देखभाल के संकेतकों का प्रयोग तथा प्राथमिक स्वास्थ्य देखभाल की स्थिति के बारे में जानकारी।

5.3 राष्ट्रीय स्तर पर महत्वपूर्ण आंकड़े

अक्सर इन दरों के सटीक आंकड़ों का संग्रह करते हुए कई समस्याओं का सामना करना पड़ सकता है। रुग्णता सर्वेक्षणों में आंकड़े अनुदैर्ध्य (Longitudinal) आधार पर एकत्र किए जाते हैं जिस हेतु चयनित घरों में साप्ताहिक या फिर कम से कम पाक्षिक मुआयना किया जाता है। रुग्णता सर्वेक्षण में दो मुआयनों के बीच का अन्तर संदर्भ अवधि कहलाती है। यह अवधि दो सप्ताह से अधिक नहीं होनी चाहिए। लम्बा अन्तर आने से जानकारी प्रदान करने वाला व्यक्ति कुछ जरूरी बातें भूल सकता है। रोग जैसे कि अतिसार, श्वसन तंत्र के तीव्र संक्रमण और खसरा आम तौर पर कुपोषण से सम्बद्ध रहते हैं। ऐसा माना जा सकता है कि इन रोगों का बार-बार होना बालक को कुपोषित करता है। इसके

अलावा, कुपोषण बालक को इन बीमारियों के लिए संवेदनशील भी कर सकता है, क्योंकि गंभीर कुपोषण बालक की रोग प्रतिरोधक क्षमता (संक्रमण से लड़ने की क्षमता) को कम कर देता है। इन आंकड़ों का संक्षिप्त ब्यौरा निम्नलिखित है:

क्र.सं.	पैरामीटर	1951	1981	1991	2005	2011
1.	अशोधित जन्म दर (प्रति 1000 जनसंख्या)	40.8	33.9	29.5	23.8	21.0
2.	अशोधित मृत्यु दर (प्रति 1000 जनसंख्या)	25.1	12.5	9.8	7.6	6.7
3.	कुल प्रजनन दर	6.0	4.5	3.6	2.9	2.3
4.	मातृ मृत्यु अनुपात (प्रति 100000 जीवित जन्म)	NA	NA	398 (1997-98)	301 (2001-03)	167
5.	शिशु मृत्यु दर (प्रति 1000 जीवित जन्म)	146 (1951-61)	110	80	58	39
6.	बाल मृत्यु दर (0-4 वर्ष) प्रति 1000 बालक	57.3 (1972)	41.2	26.5	17.00 (2004)	45

स्रोत: WHO (2008). Primary Health Care- Indian Scenario. World Health Organization, Country Office for India, August 2008:55.

5.4 सूचक और उनका उपयोग

समुदाय के पोषण स्तर के मूल्यांकन के कुछ विशिष्ट अप्रत्यक्ष संकेतक निम्न हैं:

आयु विशिष्ट मृत्यु दर, कारण विशिष्ट मृत्यु दर और कारण विशिष्ट पोषण प्रासंगिक रुग्णता दर। कई बार समुदाय के पोषण स्तर को प्रभावित करने वाले परिस्थितिक कारकों पर भी आंकड़ों का संग्रह किया जाता है। इन संकेतकों का विवरण नीचे दिया जा रहा है।

5.4.1 आयु विशिष्ट मृत्यु दर

आयु विशिष्ट मृत्यु दर वह मृत्यु दर है जो एक विशेष आयु वर्ग तक सीमित रहती है। इसकी गणना निम्न सूत्र से की जाती है-

$$\frac{\text{विशिष्ट आयु वर्ग में मौतों की संख्या}}{\text{जनसंख्या में इस आयु वर्ग के कुल लोगों की संख्या}}$$

आयु विशिष्ट मृत्यु दर स्वास्थ्य स्तर का महत्वपूर्ण संकेतक है। जिन भागों में प्रोटीन ऊर्जा कुपोषण का प्रसार उच्च होता है, वहाँ 1-4 वर्ष के बच्चों की मृत्यु दर भी उच्च होती है। हालांकि शिशु मृत्यु दर को स्वास्थ्य स्तर का संकेतक माना जाता है। अब यह समझा जा चुका है कि विकासशील देशों में प्रोटीन ऊर्जा कुपोषण के उच्च दर के कारण 1-4 वर्षीय बालकों की मृत्यु दर विकसित देशों की तुलना में कई गुणा ज्यादा है।

यह इस तथ्य से भी स्पष्ट है कि स्वतन्त्रता के पश्चात शिशु मृत्यु दर में काफी गिरावट आई है (करीब 160 से 40 प्रति 1000 जीवित जन्म)। एक से चार वर्षीय बालकों की उच्च मृत्यु दर का मुख्य कारण इस उम्र में पोषण संबंधी दबाव और उच्च रुग्णता दर का संयुक्त प्रभाव है।

आयु विशिष्ट मृत्यु दर के आंकड़े जहां-जहां जन्म एवं मृत्यु के अभिलेख हैं, वहां से प्राप्त किए जा सकते हैं। भारत में प्रत्येक दशक में एकत्रित किए जाने वाले जनगणना आंकड़े भी ये सूचना दे सकते हैं। यदि आवश्यक विशेषज्ञता उपलब्ध हो तो सांख्यिकीय रूप से पर्याप्त नमूने पर विशेष सर्वेक्षण भी आयोजित किया जा सकता है। हालांकि इस तरह के सर्वेक्षण श्रमसाध्य और समय लेने वाले होते हैं तथा मूल्यांकन की प्रत्यक्ष विधियों पर कोई अतिरिक्त जानकारी प्रदान नहीं करते।

5.4.2 कारण विशिष्ट मृत्यु दर

कारण विशिष्ट मृत्यु दर आबादी के लिए एक निर्दिष्ट कारण से मृत्यु दर हैं। इसमें एक विशेष कारण से हुई मौतों की संख्या का अंश होता है। एक समयावधि के ठीक मध्य में ''खतरे में'' आने वाली आबादी की संख्या विभाजक होती है।

कारण विशिष्ट मृत्यु दर के आंकड़े समुदायों के पोषण स्तर के अप्रत्यक्ष मूल्यांकन हेतु अत्यधिक उपयोगी हैं। हालांकि, भारत में इस प्रकार के आंकड़े सभी इलाकों में उपलबध नहीं होते और अधिकतर सटीक भी नहीं होते। इस प्रकार के आंकड़े स्वास्थ्य केन्द्रों व अस्पतालों से लिए जा

सकते हैं। यदि अभिलेख उपलब्ध हों तो चिकित्सकीय पहचान योग्य कुपोषण से मृत्यु दर, समुदायों के पोषण स्तर का अप्रत्यक्ष रूप से मूल्यांकन करने में मददगार हो सकते हैं। पोषण हीनताओं के नैदानिक मरीजों की अस्पताल में भर्ती, विशेषकर प्रोटीन ऊर्जा कुपोषण एवं कैरेटोमलेशिया को भी समुदाय के पोषण स्तर के संकेतक के रूप में प्रयोग में लाया जाता है।

5.4.3 कारण विशिष्ट पोषण - प्रासंगिक रुग्णता दर

पोषण प्रासंगिक रोग जैसे कि खसरा, अतिसार, तीव्र श्वसन संक्रमणों के प्रसार/व्यापकता की जानकारी भी समुदाय पोषण स्तर का अप्रत्यक्ष सूचकांक होती है। नैदानिक परिवेशों में गंभीर कुपोषण से ग्रसित अधिकांश बच्चे कुपोषण होने से पूर्व कुछ रोगों से ग्रसित रहे होते हैं। वास्तव में पूर्व के समय में, खसरे और अतिसार की महामारी के पश्चात कुपोषण की महामारी देखी जाती थी। अन्य रोग भी कुपोषण में योगदान देते हैं। इनमें से कुछ हैं आन्त्रीय हैल्मिन्थिसिस, मलेरिया और क्षय रोग। ये भी समुदाय में कुपोषण की सीमा को प्रभावित कर सकते हैं। वर्तमान परिस्थितियों में एड्स का होना भी कुपोषण का महत्वपूर्ण सूचक हो सकता है।

इसलिए, क्षेत्र सर्वेक्षण के दौरान, इन रोगों के बारे में अस्पतालों और स्वास्थ्य केन्द्रों से जानकारी लेनी चहिए। अतएव कारण विशिष्ट पोषण प्रासंगिक रुग्णता दर, पोषण स्तर के मूल्याकंन हेतु महत्पूर्ण अप्रत्यक्ष संकेतांक होता है।

5.4.4 पारस्थितिकी कारक

मानव कुपोषण को पारिस्थितिक समस्या के रूप में पहचाना जा सकता है। ऐसा इसलिए कि यह समुदाय के भौतिक, जैविक और सांस्कृतिक वातावरण के कई अतिव्यापी और आपस में जुड़े हुए कारकों का अंतिम परिणाम होता है। खाद्य खपत, विशेषकर शिशुओं में स्तन्यत्याग प्रथाएं, विश्वास एवं सांस्कृतिक प्रथाएं, आयुर्विज्ञान और स्वास्थ्य सेवाएं, शिक्षा सेवाएं तथा समुदाय की सामाजिक आर्थिक स्थिति की सूचनाओं का प्रयोग समुदाय के पोषण स्तर आंकलन हेतु किया जा सकता है। यह सूचनाएं क्षेत्र के दौरे के द्वारा एकत्रित की जा सकती हैं।

5.4.5 स्वास्थ्य नीति संकेतक

राजनीतिक प्रतिबद्धता का सबसे महत्पूर्ण संकेतक ''संसाधनों'' का पर्याप्त आवंटन है।

ये संकेतक हैं:

1. स्वास्थ्य सेवाओं पर खर्च जी0 एन0 पी0 का अनुपात।
2. स्वास्थ्य संबंधित गतिविधियों (पानी की आपूर्ति, स्वच्छता, पोषण) पर खर्च सकल घरेलू उत्पाद का अनुपात।

3. प्राथमिक स्वास्थ्य देखभाल हेतु समर्पित कुल स्वास्थ्य संसाधनों का अनुपात।

5.4.6 सामाजिक संकेतक

संयुक्त राष्ट्र सांख्यिकी कार्यालय की परिभाषानुसार सामाजिक संकेतकों को 12 श्रेणियों में विभाजित किया गया है। ये इस प्रकार हैं- जनसंख्या, परिवार निर्माण, परिवार एवं घर, शिक्षा एवं शिक्षण सेवाएं, कमाई की गतिविधियां, आय का वितरण, उपभोग, सामाजिक सुरक्षा एवं कल्याण सेवाएं, स्वास्थ्य सेवाएं एवं पोषण, आवास और उसका पर्यावरण, सार्वजनिक व्यवस्था एवं सुरक्षा, अवकाश एवं संस्कृति, सामाजिक स्तरीकरण तथा अभिप्रेरण।

5.4.7 स्वास्थ्य देखभाल प्रावधान के संकेतक

- शिशु मृत्यु दर व मातृ मृत्यु दर
- जन स्वास्थ्य सेवाओं जैसे महिला स्वास्थ्य, बाल स्वास्थ्य, जल, शौचालय व्यवस्था, स्वच्छता, प्रतिरक्षण व पोषण की सार्वभौमिक पहुंच।
- संक्रामक, गैर संक्रामक रोगों, स्थानीय स्तर पर होने वाले रोगों का नियंत्रण एवं रोकथाम।
- एकीकृत व्यापक प्राथमिक स्वास्थ्य देखभाल तक पहुँच।
- जनसंख्या स्थिरीकरण, लिंग व जनसांख्यिकीय संतुलन।
- स्थानीय स्वास्थ्य परंपरा का पुनर्जीवन।
- जीवन शैली।

5.4.8 स्वास्थ्य स्तर संकेतक

''एक बुद्धिमान व्यक्ति को यह एहसास होना चाहिए कि स्वास्थ्य उसका सबसे मूल्यावान अधिकार है'' (हिप्पोक्रैट्स 460-377 बी सी)।

रोगों हेतु उत्तरदायी कारकों के बारे में बढ़ते ज्ञान और प्रौद्योगिकी विकास से पिछले दशकों की अनेक स्वास्थ्य समस्याओं (जैसे कि संक्रामक रोग) समाप्त हुए हैं। लोगों की जागरूकता में सुधार जरूर हुआ है पर अभी भी कई के लिए स्वास्थ्य का अर्थ बीमारी की अनुपस्थिति ही होता है। यहाँ पर सवाल उठता हैं - ''स्वास्थ्य को कैसे मापा जाए?'' समुदाय के स्वास्थ्य स्तर को नापने के लिए कुछ संकेतक प्रयोग में लाए जातें है। ये संकेतक यह नापने में मदद करतें हैं कि किसी कार्यक्रम के लक्ष्य और उद्देश्य किस हद तक प्राप्त किये जा रहे हैं।

5.5 संकेतकों की विशेषताएँ

आदर्श संकेतकों में निम्नलिखित विशेषताएँ होती हैं:

1. आदर्श संकेतक मान्य होने चाहिए अर्थात् ये वास्तव में वो ही नापें जो जिन्हें नापना चाहिए।
2. ये विश्वसनीय और वस्तुनिष्ठ होने चाहिए: विभिन्न लोग अगर एक से हालात में मापन करते हैं तब भी परिणाम एक रहना चाहिए।
3. परिस्थिति में परिवर्तन के लिए संवेदनशील होने चाहिए।
4. विशिष्ट होने चाहिए।
5. सिर्फ परिस्थितिवश होने वाले परिवर्तनों को ही प्रतिबिंबित करने वाले होने चाहिए।

5.6 संकेतकों का वर्गीकरण

स्वास्थ्य बहु आयामी है और प्रत्येक आयाम कई कारकों से प्रभावित होता है। इसलिए स्वास्थ्य केवल एक सूचक से नहीं मापा जा सकता है। यह स्पष्ट रूप से इंगित करता है स्वास्थ्य के वर्णन हेतु कई कारकों/संकेतकों की आवश्यकता होती है। इन संकेतकों को इस प्रकार वर्गीकृत किया जाता है-

- मृत्यु दर संकतेक
- रुग्णता दर संकेतक
- अक्षमता संकेतक
- पोषण
- स्वास्थ्य देखभाल प्रदाय
- जीवन की गुणवत्ता के संकेतक
- स्वास्थ्य नीति संकेतक
- सामाजिक - आर्थिक संकेतक
- पर्यावरणीय संकेतक
- मानसिक स्वास्थ्य के संकेतक
- अन्य संकेतक
- सेवा प्रयोग दरें

5.6.1 मृत्यु दर संकेतक

अशोधित मृत्यु दर

यह दर किसी समुदाय में प्रति वर्ष प्रति 1000 लोगों की जनसंख्या पर होने वाली मौतों की संख्या बताती है। यह दर मरने वालों की संख्या इंगित करती है। हालांकि यह स्वास्थ्य स्तर मापने का पूर्ण

रूप से उपयुक्त तरीका नहीं है क्योंकि यह जनसंख्या के उम्र-लिंग संघटन से प्रभावित होती है, फिर भी जनता में समग्र स्वास्थ्य सुधार का मूल्यांकन करने हेतु ठीक है।

जीवन प्रत्याशा

जन्म के समय जीवन प्रत्याशा औसत वर्ष वह संख्या हैं जो कि जीवित जन्मे जनंसख्या के लोगों द्वारा जी जाएगी। जन्म के समय जीवन प्रत्याशा शिशु मृत्यु दर से अत्यन्त प्रभावित रहती है। जीवन प्रत्याशा में वृद्धि को स्वास्थ्य स्तर में सुधार के रूप में देखा जा सकता है।

शिशु मृत्यु दर

यह स्वास्थ्य स्तर का सबसे सार्वभौमिक रूप से स्वीकार्य संकेतक है। यह संकेतक संपूर्ण आबादी और सामाजिक आर्थिक स्थिति के लिए प्रयोग हो सकता है। प्रसवकालीन स्वास्थ्य देखभाल की उपलब्धता, उपयोग और प्रभावशीलता का यह संवेदनशील संकेतक है। यह मूल रूप से किसी वर्ष में उम्र के एक वर्ष के अन्तर्गत होने वाली मौतों की संख्या का उसी वर्ष हुए कुल जीवित जन्मों का अनुपात है, जिसे आम तौर पर प्रति 1000 जीवित जन्म दर के रूप में व्यक्त किया जाता है।

बाल मृत्यु दर

इसे किसी वर्ष में 1-4 वर्ष के आयु वर्ग में हुई मौतों की संख्या उसी वर्ष के मध्य में इसी आयु वर्ग के प्रति 1000 बच्चों की संख्या के रूप में परिभाषित करते हैं। अपर्याप्त मातृ एवं शिशु स्वास्थ्य सेवाओं के अलावा यह अपर्याप्त पोषण से भी संबंधित है। प्रतिरक्षण का प्रसार कम होने पर भी यह दर उच्च होती है।

पाँच वर्ष के नीचे आनुपातिक मृत्यु दर

यह 5 वर्ष से नीचे के आयु वर्ग में होने वाली कुल मौतों का अनुपात है। इस दर को शिशु और बाल मृत्यु दरों को दर्शाने के लिए प्रयोग में लाया जा सकता है। अस्वच्छता की स्थिति में इस दर में वृद्धि होती है। यह दर उच्च जन्म दर, उच्च बाल मृत्यु दर और छोटी जीवन प्रत्याशा को दर्शाती है।

मातृ मृत्यु दर

प्रति 100000 गर्भवती महिलाओं में होने वाली गर्भवती स्त्रियों की मौतों की और गर्भपात के 42 दिनों के अन्दर होने वाली मौतों की संख्या मातृ मृत्यु दर है। यह दर जनता को उपलब्ध मातृ देखभाल सेवाओं की गुणवत्ता को दर्शाता है। मातृ मृत्यु को प्रभावित करने वाले मुख्य कारक हैं जैसे माता की उम्र, दो जन्मों के मध्य समय, बच्चों की संख्या और कुपोषण।

रोग विशिष्ट मृत्यु दर

विशिष्ट रोगों के लिए मृत्यु दर की गणना की जा सकती है। जैसे-जैसे देश संक्रामक रोगों के बोझ से मुक्त होने लगते हैं वैसे-वैसे कई अन्य संकेतक कैंसर, हृदय रोग, दुर्घटनाओं, मधुमेह से होने वाली मौतें विशेष रोग समस्या के रूप में विलय होते हैं। समुदाय में एक बीमारी के बोझ का सरलतम माप आनुपातिक मृत्यु दर है अर्थात् कुल मौतों में इस समय किसी विशिष्ट रोग की वजह से हुई मौतों का अनुपात। उदाहरण के लिए, अधिकांश पश्चिमी देशों में 25 से 30 प्रतिशत मौतों का कारण कोरोनरी हृदय रोग होता है। संक्रामक रोग से आनुपातिक मृत्यु दर को स्वास्थ्य स्तर का उपयोगी संकेतक माना जाता है।

5.6.2 रुग्णता दर संकेतक

परंपरागत मृत्यु दर संकेतक समुदाय के स्वास्थ्य स्तर का पूरी तरह से प्रतिनिधित्व करने के लिए पर्याप्त नहीं हैं क्योंकि ये समुदाय में खराब स्वास्थ्य के बोझ को प्रकट नहीं करता है। इसलिए रुग्णता दर संकेतकों को मृत्यु दर के आंकड़ों के पूरक के रूप में प्रयोग में लाया जाता है जिससे कि जनता के स्वास्थ्य स्तर का वर्णन किया जा सके। निम्नलिखित रुग्णता दरों को समुदाय की खराब सेहत के आंकलन हेतु काम में लिया जाता है।

- रोग की घटना और प्रसार
- अधिसूचना दरें
- भर्ती और छुट्टी (अस्पताल से) दरें
- ओ.पी.डी/स्वास्थ्य केन्द्र में उपस्थिति
- अस्पताल में भर्ती की अवधि
- बीमारी के प्रकरण और विद्यालय/कार्य से अनुपस्थिति

5.6.3 अक्षमता दरें

हाल के वर्षों में, बड़े पैमाने पर स्वास्थ्य व्यय के बावजूद अक्षमता की दरें बढ़ रही हैं। अक्षमता दरें इस धारणा पर आधारित हैं कि स्वास्थ्य से तात्पर्य है दैनिक क्रिया कलापों की पूरी श्रृंखला।

अक्षमता दरों का वर्गीकरण

आम तौर पर इस्तेमाल अक्षमता दरों को दो प्रकार में वर्गीकृत किया जाता है।

(अ) घटना प्रकार के संकेतक- प्रतिबंधित गतिविधियों वाले दिनों की संख्या, बिस्तर पर लेटे रहने वाली अक्षमता के दिवस, कार्य हानि दिवस

(ब) व्यक्ति प्रकार संकेतक- दैनिक गतिविधियों में बाधा, गतिशीलता की बाधा

5.6.4 पोषण स्तर संकेतक

पोषण स्तर सकारात्मक संकेतक है। पोषण स्तर के तीन सूचक स्वास्थ्य स्तर के संकेतक हैं- पूर्व शालीय बालकों की मानवमिति, विद्यालय प्रवेश के समय बालकों का कद एवं वजन, कम जन्म वजन की व्यापकता। मानवमिति में कद, वजन, सिर व छाती की परिधि, मध्य बाँह परिधि सम्मिलित होते हैं।

5.6.5 स्वास्थ्य देखभाल प्रदाय संकेतक

स्वास्थ्य सेवा प्रदाय में अक्सर इस्तेमाल होने वाले संकेतक निम्न हैं:

- चिकित्सक - जनसंख्या अनुपात
- चिकित्सक - नर्स अनुपात
- जनसंख्या - बिस्तर (अस्पताल में भर्ती हेतु) अनुपात
- जनसंख्या - प्रति स्वास्थ्य केन्द्र/उप केन्द्र
- जनसंख्या - प्रति पारंपरिक जन्म परिचय

ये संकेतक देश के विभिन्न भागों में स्वास्थ्य संसाधनों के वितरण की समानता और स्वास्थ्य देखभाल प्रावधान को दर्शाते हैं।

स्वास्थ्य देखभाल का उपयोग स्वास्थ्य सेवाओं की उपलब्धता और सुलभता तथा व्यक्ति का अपने स्वास्थ्य और स्वास्थ्य प्रणाली के लिए दृष्टिकोण आदि कारकों से प्रभावित होता है। उदाहरणतः

- गर्भवती महिलाओं की प्रसव पूर्व देखभाल का अनुपात
- परिवार नियोजन की विभिन्न विधियों का प्रयोग करने वाली जनसंख्या का प्रतिशत

5.6.6 पर्यावरणीय संकेतक

पर्यावरणीय संकेतक उस भौतिक और जैविक पर्यावरण की गुणवत्ता को दर्शाते हैं जिसमें लोग रहते हैं और जिसमें बीमारियाँ होती हैं। इसमें सम्मिलित हैं वायु एवं जल प्रदूषण, विकिरण, ठोस अपशिष्ट, शोर, भोजन-पानी द्वारा विषाक्त पदार्थों से संपर्क से संबंधित संकेतक।

5.6.7 सामाजिक आर्थिक संकेतक

ये संकेतक स्वास्थ्य देखभाल के संकेतकों को समझने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। यह निम्न हैं-

- जनसंख्या वृद्धि की दर

- सकल राष्ट्रीय उत्पाद (जी0 एन0 पी0)
- बेरोजगारी
- निर्भरता अनुपात
- साक्षरता दरें (विशेषकर महिला साक्षरता दर)
- परिवार का आकार
- आवास- प्रति कक्ष लोगों की संख्या
- प्रति व्यक्ति ऊर्जा ''कैलोरी'' उपलब्धता

5.6.8 स्वास्थ्य नीति संकेतक

5.4.5 खण्ड देखें।

5.6.9 जीवन की गुणवत्ता के संकेतक

स्वास्थ्य स्तर के मापन हेतु मृत्यु और रुग्णता दरों तक सीमित रहने के बजाय व्यक्तियों और समुदायों के जीवन की गुणवत्ता पर भी समुचित ध्यान देना चाहिए। जीवन की भौतिक गुणवत्ता सूचक, तीन संकेतकों को समाहित करता है- शिशु मृत्यु दर, किसी आयु की जीवन प्रत्याशा तथा साक्षरता दर।

5.6.10 प्राथमिक स्वास्थ्य देखभाल

प्राथमिक स्वास्थ्य देखभाल जिसका अक्सर संक्षिप्तीकरण पी.एच.सी. (Primary Health Centre) के रूप में किया जाता है, आवश्यक स्वास्थ्य देखभाल है। यह व्यवहारिक, वैज्ञानिक तौर पर सक्षम और सामाजिक रूप से स्वीकार्य विधियों और तकनीकों पर आधारित है। यह व्यक्तियों और परिवारों को सार्वभौनिक रूप से पहुँचती है जिसमें इन्हीं की पूरी भागीदारी होती है तथा इसमें लागत इतनी ही होती है कि समुदाय और देश अपने विकास के हर स्तर पर आत्मनिर्णय की भावना से खर्च कर बनाए रख सकता है।

यह स्वास्थ्य देखभाल के लिए नया दृष्टिकोण था जो कि 1978 में आल्मा आटा में विश्व स्वास्थ्य संगठन और यूनिसेफ द्वारा आयोजित अन्तर्राष्ट्रीय सम्मेलन में अस्तित्व में आया था। सभी के लिए स्वास्थ्य के उद्देश्य की प्राप्ति हेतु प्राथमिक स्वास्थ्य देखभाल समस्त सदस्य देशों द्वारा स्वीकारा गया था।

भारत में स्वास्थ्य सेवाएं तीन स्तरीय अर्थात् प्राथमिक, द्वितीयक और तृतीयक स्थापना द्वारा प्रदान की जाती हैं। प्राथमिक स्वास्थ्य देखभाल पहले सोपान के रूप में दी जाने वाली स्वास्थ्य देखभाल है जो कि समुदाय का स्वास्थ्य प्रणाली के साथ प्रथम संपर्क होता है।

प्राथमिक स्वास्थ्य देखभाल के सिद्धांत

प्राथमिक स्वास्थ्य देखभाल के सिद्धान्त समान वितरण, सामुदायिक भागीदारी, अंतर-क्षेत्रीय समन्वय और उपयुक्त प्रौद्यौगिकी हैं। इसके अलावा दलीय भावना से कार्यकलाप, विकेन्द्रीकरण, प्रभावी रैफरल प्रणाली भी इसके महत्पूर्ण तत्व हैं।

प्राथमिक स्वास्थ्य देखभाल के तहत सेवाएं सार्वभौमिकता के सिद्धांत के अनुसार लोगों को सुलभ और उपलब्ध करानी होती हैं। यह राज्य/देश की भूमिका और जिम्मेदारियां निर्धारित करते हुए यह मान्यता रखती है कि स्वास्थ्य एक बहु भाज्य इकाई है और स्वास्थ्य के लिए बहु क्षेत्रीय दृष्टिकोण की आवश्यकता है। यह दृष्टिकोण पूर्ण तथा संगठित सामुदायिक भागीदारी और व्यक्तियों एवं समुदाय की अपने स्वास्थ्य के लिए बुनियादी आत्मनिर्भरता पर जोर देता है।

प्राथमिक स्वास्थ्य देखभाल स्वास्थ्य को किसी देश के सामाजिक आर्थिक विकास के अभिन्न अंग के रूप में देखता है। यह निवारक, प्रोत्साहक, उपचारात्मक और पुनर्वास संबंधी स्वास्थ्य सेवाओं के एकीकरण की आवश्यकता पर बल देता है। पांरपरिक रूप से यह आशा की जाती है कि प्राथमिक स्वास्थ्य देखभाल में कम से कम निम्न सम्मिलित होंगे-

- प्रचलित स्वास्थ्य समस्याओं की शिक्षा और इनसे बचने और नियन्त्रण करने की विधियां
- खाद्य आपूर्ति को प्रोत्साहन और उचित पोषण
- पर्याप्त जलापूर्ति और बुनियादी स्वच्छता
- मातृ एवं बाल स्वास्थ्य और परिवार नियोजन
- मुख्य संक्रमणों से बचने हेतु टीकाकरण
- स्थानीय रूप से होने वाली प्रमुख बीमारियों से बचाव और नियन्त्रण
- आवश्यक दवाओं की व्यवस्था

वर्तमान सुधार इस आधारभूत पैकेज से आगे जीवनशैली विकारों और समुदाय में प्रत्येक के लिए स्वास्थ्य की ओर किए जा रहे हैं।

प्राथमिक स्वास्थ्य देखभाल के लक्ष्य

- अल्मा आटा घोषणा में सभी के लिए स्वास्थ्य आत्म निर्भरता द्वारा दिया गया वैश्विक लक्ष्य है।
- स्वास्थ्य आरम्भ होता है घर, विद्यालय और कार्यस्थल से, क्योंकि जहां लोग रहते व कार्य करते हैं, वहीं पर स्वास्थ्य बनता अथवा बिगड़ता है।

- यह भी अर्थ है कि रोगों से बचने और अपरिहार्य बीमारियों तथा विकारों को हटाने के लिए लोग वर्तमान से बेहतर तरीकों का प्रयोग करेंगे। वे बेहतर रूप से बढ़ेंगे, उम्रदराज होंगे और मृत्यु को प्राप्त होंगे।
- यह भी अर्थ है कि स्वास्थ्य के लिए जो भी संसाधन उपलब्ध हैं उनका जनता में बराबरी से वितरण होगा।
- इसका अर्थ है कि आवश्यक स्वास्थ्य सेवाएं व्यक्तियों और परिवारों को स्वीकार्य और सस्ते तरीके से सुलभ होंगी।

प्राथमिक स्वास्थ्य देखभाल की रणनीतियां

1. स्वास्थ्य सेवाओं की पहुँच, उपलब्धता, सामर्थ्य अनुरूप होना और स्वीकार्यता

रणनीतियां:

- स्वास्थ्य सेवाएं वहाँ हों जहां लोग हैं।
- प्रति 10-20 घरों पर एक समुदाय स्वास्थ्य कार्यकर्ता के अनुपात से स्वदेशी/स्थानीय निवासी स्वयंसेवक का स्वास्थ्य देखभाल प्रदाता के रूप में प्रयोग।
- आवश्यक दवाओं के साथ परंपरागत (हर्बल) दवाओं का प्रयोग

2. उच्च गुणवत्ता की, आधारभूत और आवश्यक स्वास्थ्य सेवाओं का प्रावधान

रणनीतियां:

- समुदाय की जरूरतों और प्राथमिकताओं पर आधारित प्रशिक्षण तथा पाठ्यक्रम योजना।
- प्रोत्साहक, निवारक, उपचारात्मक और पुनर्वास संबंधी स्वास्थ्य देखभाल के लिए व्यवहार, ज्ञान और कौशल का विकास।
- समुदाय स्वास्थ्य कार्यकर्ताओं के क्रिया कलापों पर समुदाय एवं स्वास्थ्य कर्मचारियों की नियमित निगरानी तथा आवधिक मूल्याकंन।

3. सामुदायिक भागीदारी

रणनीतियां:

- स्वास्थ्य एवं स्वास्थ्य संबंधी मुद्दों पर जागरुकता निर्माण और चेतना पैदा करना।
- छोटे समूह (10-20 घर) की बैठकों द्वारा नियोजन, क्रियान्वयन, निगरानी और मूल्यांकन करना।
- स्वास्थ्य समितियों का गठन ।
- नगरपालिका स्तर पर एक सामुदायिक स्वास्थ्य संगठन की स्थापना।

- स्वास्थ्य समस्याओं का मुकाबला करने के लिए जन स्वास्थ्य अभियान और अभिप्रेरण।

4. आत्म निर्भरता

रणनीतियां:

- समुदाय स्वास्थ्य कार्यक्रमों के लिये समर्थन (नकद, श्रम) उत्पन्न करें।
- स्थानीय संसाधनों का उपयोग (मानव, वित्तीय, सामग्री)।
- समुदाय का नेतृत्व और प्रबंधन कौशल में प्रशिक्षण।
- आय सृजन परियोजनाओं, सहकारिता और लद्यु उद्योगों का संसर्ग।

5. स्वास्थ्य और विकास के आपसी संबंध को मान्यता

रणनीतियां:

- स्वास्थ्य, खाद्य, पोषण, जल, स्वच्छता और जनंसख्या सेवाओं का सम्मिलित करना।
- राष्ट्रीय, क्षेत्रीय, प्रांतीय, नगर निगम विकास योजनाओं में पी.एच.सी का एकीकरण।
- आर्थिक नियोजन, शिक्षा, कृषि, उद्योग, आवास लोक निर्माण, संचार और सामाजिक सेवाओं के साथ गतिविधियों का समन्वय।
- प्रभारी स्वास्थ्य रैफरल प्रणाली की स्थापना।

6. सामाजिक अभिप्रेरण

रणनीतियां:

- प्रभावी स्वास्थ्य रैफरल प्रणाली की स्थापना।
- बहु क्षेत्रीय और अंतः विषय संपर्क।
- मल्टी मीडिया का प्रयोग करते हुए सूचना, शिक्षा, सम्प्रेषण को समर्थन।
- सरकारी और गैर सरकारी संगठनों के बीच सहयोग।

7. विकेन्द्रीकरण

रणनीतियां:

- बजटीय संसाधनों का पुनर्वितरण।
- स्वास्थ्य पेशेवर और पी.एच.सी. का पुनर्मिविन्यास।
- राजनैतिक और राष्ट्रीय नेतृत्व से समर्थन के लिए वकालत।

भारत में प्राथमिक स्वास्थ्य देखभाल प्रदान करने का तरीका

भारत की स्वास्थ्य प्रणाली प्राथमिक स्वास्थ्य देखभाल दृष्टिकोण के साथ बनाई गई है। ग्रामीण क्षेत्रों में प्राथमिक स्वास्थ्य देखभाल के प्रावधान के लिए भारत में सुदृढ़ बुनियादी सुविधाएं हैं। भारत में प्राथमिक स्वास्थ्य देखभाल प्रदान करने हेतु सरकार द्वारा संचालित उप केन्द्रों, प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्रों और सामुदायिक स्वास्थ्य केन्द्रों की श्रृंखला को तैयार किया गया है। इन स्वास्थ्य केन्द्रों के लिए विशिष्ट जनसंख्या मानदंड हैं।

एक उपकेन्द्र समुदाय और प्राथमिक स्वास्थ्य देखभाल प्रणाली के बीच प्रथम संपर्क हैं। प्रत्येक उप केन्द्र एक महिला और एक पुरुष बहु उद्देश्शीय कार्यकर्ता द्वारा चलाया जाता है। प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र में एक चिकित्सक और 14 पैरा मेडिकल कर्मचारी होते हैं। यह 6 उप केन्द्रों के लिए रैफरल इकाई की तरह कार्य करता है तथा इसमें 4 से 6 मरीजों की भर्ती व्यवस्था होती है। सामुदायिक चिकित्सा केन्द्र में चार विशेषज्ञ चिकित्सक होते हैं- शल्य क्रिया विशेषज्ञ, फिजीशियन, बाल रोग विशेषज्ञ और महिला रोग विशेषज्ञ। इसके अलावा 21 पैरा मेडिकल एवं अन्य कर्मचारी होते हैं। इसमें 30 मरीजों के भर्ती की व्यवस्था, शल्यक्रिया कक्ष, एक्स-रे सुविधा, प्रसूति कक्ष और प्रयोगशाला होती है। यह 4 पी.एच.सी के लिए रैफरल केन्द्र का कार्य करता है। देश में वर्ष 2012 तक 1,46,026 उप केन्द्र और 23,236 पी.एच. सी थे।

5.7 सारांश

जन समुदाय की पोषण अवस्था, आहार, संक्रमण और परजीवी बीमारियों द्वारा अत्यधिक रूप से प्रभावित होती है। पोषण स्तर का मूल्यांकन अप्रत्यक्ष विधियों से भी किया जा सकता हैं जैसे कि मृत्यु दर (शिशु, मातृ, प्रसवकालीन मृत्यु दर), रुग्णता दर और अन्य स्वास्थ्य संबंधी आंकड़े। समुदाय के पोषण स्तर के मूल्यांकन के कुछ विशिष्ट अप्रत्यक्ष संकेतक निम्न हैं: आयु विशिष्ट मृत्यु दर, कारण विशिष्ट मृत्यु दर और कारण विशिष्ट पोषण प्रसांगिक रुग्णता दर। कई बार समुदाय के पोषण स्तर को प्रभावित करने वाले परिस्थितिक कारकों पर भी आंकड़ो का संग्रह किया जाता है। पोषण स्तर सकारात्मक संकेतक है। पोषण स्तर के तीन सूचक स्वास्थ्य स्तर के संकेतक हैं- पूर्व शालीय बालकों की मानवमिति, विद्यालय प्रवेश के समय बालकों का कद एवं वजन, कम जन्म वजन की व्यापकता। पर्यावरणीय संकेतक उस भौतिक और जैविक पर्यावरण की गुणवत्ता को दर्शाते हैं जिसमें लोग रहते है। प्राथमिक स्वास्थ्य देखभाल भी एक सकारात्मक संकेतक है। इसका संक्षिप्तीकरण अक्सर पी.एच. सी. (Primary Health Centre) के रूप में किया जाता है जो आवश्यक स्वास्थ्य देखभाल हैं।

5.8 निबंधात्मक प्रश्न

1. पोषण के अप्रत्यक्ष मूल्यांकन की क्या आवश्यकता है?
2. कारण विशिष्ट मृत्यु दर क्या है?
3. आयु विशिष्ट मृत्यु दर किस प्रकार पोषण स्तर मूल्यांकन से संबंधित है?
4. स्वास्थ्य नीति संकेतक कौन से हैं?
2. रुग्णता दरें किस प्रकार स्वास्थ्य स्तर की जानकारी देती हैं?
3. प्राथमिक स्वास्थ्य देखभाल के सिद्धांत और उद्देश्य क्या हैं?